॥ श्रीः ॥

वाणीविलास ग्रन्थरत्नमालायाः द्वितीयं रत्नम् ।

पं० श्रीसीतारामशर्म सम्पादितम्

अति

बृहदवकहडाचक्रम् ।

अर्थात्

...शास्त्र-सोपानं

...काशकः—
...न्हैयालाल बृजभूषणदास गुप्तः
वाणीविलास-संस्कृत पुस्तकालय,
कचौड़ी गली, बनारस ।

मूल्यं दशाणकाः

॥ श्रीः ॥

अतिबृहदवकहडाचक्रम् ।

अर्थात्

ज्योतिश्शास्त्रसोपानम्

दरभङ्गा-मण्डलान्तर्गत-चौगमा-निवासि-काशीस्थ-
संन्यासि-संस्कृतपाठशालीय-ज्यौतिष-
शास्त्राध्यापक-ज्यौतिषाचार्य-
तीर्थ-

पण्डितश्रीसीतारामशर्मणा

सम्पादितम् ।

तत्कृतभाषानुवादसहितम् ।

तेनैव संशोधितश्च ।

चतुर्थ-संस्करणम्] [सं० १९९६

प्रकाशकः—

बा० कन्हैयालाल बृजभूषणदास

बुक्सेलर

कचौड़ी गली, काशी ।

मुद्रकः—

बी० के० शास्त्री

ज्योतिष प्रकाश प्रेस, काशी ।

प्रस्तावना ।

वेदस्य निर्मलं चक्षुर्ज्योतिश्शास्त्रमकल्मषम् ।
विनैतदखिलं श्रौतं स्मार्तं कर्म न सिद्ध्यति ॥

संसार में कोई ऐसा मनुष्य नहीं है जिसको किसी कार्य की आवश्यकता न पड़ती हो। तथा कोई ऐसा कार्य नहीं है जिसमें ज्यौतिषशास्त्रकी आवश्यकता न होती हो। इस लिये ज्यौतिषशास्त्रका ज्ञान सबके लिये आवश्यक है। परञ्च आज तक कोई ऐसा ग्रन्थ नहीं बना कि केवल एक मात्र ग्रन्थके अवलोकन से सकल साधारण जन भी थोड़ेही समयमें व्यावहारिक सब कार्यको कर सकें। इस कठिनताको देख कर मैं अपनी क्षुद्रबुद्धि के अनुसार जितने ज्यौतिषसम्बन्धि व्यावहारिक विषय हैं उन सब विषयों को इस छोटेसे ग्रन्थ में संग्रह किया हूँ। अतएव इसका अन्वर्थ नाम भी "ज्यौतिश्शास्त्र-सोपान" रक्खा गया है। इस ग्रन्थके सम्यक् अवलोकन से समस्त फलित ज्योतिःशास्त्रमें प्रवेश हो सकता है तथा इसमें जो कुछ कठिनतायें थीं वे उदाहरण सहित सरल हिन्दी भाषामें अनुवाद करके स्पष्ट कर दी गई हैं जिससे इस ग्रन्थको किसी गुरुसे पढ़नेकी आवश्यकता नहीं है। केवल देवनागरी अक्षर मात्र जानने वाले भी इस ग्रन्थ से सब प्रकार

के मुहूर्त बतला सकते हैं तथा लघुजन्मपत्र और वर्षपत्र स्पष्ट-ग्रह, तन्वादि द्वादशभाव इत्यादि बना सकते हैं। तथा इसके अन्तमें नवग्रहमन्त्र, जपसंख्या, अंगस्फुरण, पल्लीपतन, स्वप्नफल इत्यादि भी लिखा गया है। इसमें आवश्यक उदाहरण आदि भी जो कुछ त्रुटियाँ रह गईं थीं वह इस (चतुर्थ संस्करण) में पूर्ति कर दी गई हैं। यदि इस ग्रन्थसे सज्जन समाज में कुछ भी लाभ पहुँचा तो मेरा श्रम सफल होगा। अन्त में सुजन महानुभावोंसे यह प्रार्थना है कि इसमें फिर भी जो कुछ त्रुटि रह गई हो कृपया सूचना दें जिससे पाँचवीं आवृत्ति में पूरी कर दी जायगी। और इसमें मनुष्यधर्मवश जो कुछ त्रुटि हुई हो कृपया संशोधन करके अनुगृहीत करें॥ इति॥

सुजनसमाजकृपाभिलाषी—

श्रीसीताराम झा, चौगमा।

!! अथ !!

विषयानुक्रमणिका ।

विषय	पृष्ठांक

विषय	पृष्ठांक	विषय	पृष्ठांक

॥ इति विषयानुक्रमणिका ॥

पुस्तक मिलने का पता—

बा० कन्हैयालाल बृजभूषणदास, बुकसेलर

कचौड़ी गली, बनारस सिटी।

॥ श्रीगणेशायनमः ॥

ज्योतिःशास्त्रसोपानम्

अर्थात्

अति बृहत् अवकहडाचक्रम् ।

मङ्गलाचरण—

नत्वा गिरं गणेशं च गुरुं ध्यात्वा सतां मुदे ।
ज्योतिःशास्त्रप्रवेशाय सोपानं क्रियते मया ॥ १ ॥
ग्रन्थेभ्यः सारमादाय पूर्वोक्तान्येव कानिचित् ।
लिख्यन्ते चात्र पद्यानि स्वकृतान्यपि कानिचित् ॥

ज्योतिःशास्त्रप्रशंसा—

"वेदस्य निर्मलं चक्षुर्ज्योतिःशास्त्रमकल्मषम् ।
विनैतदखिलं श्रौतं स्मार्तं कर्म न सिद्ध्यति ॥"
वेदाङ्गत्वाद् द्विजैरेव पठनीयमिदं तथा ।
सुपरिक्षितशिष्याय देयं वत्सरवासिने ॥

पढ़ने में अनध्याय—

चतुर्दश्यष्टमीदर्शपूर्णिमाप्रतिपत्स्वपि ।
आकापौचद्वितीयायां वेदाङ्गं नैव पाठयेत् ॥

अथ कालादिपरिभाषा—

षड्भिः प्राणैः पलं ज्ञेयं तत्षष्ट्या दण्ड उच्यते ।
दण्डषष्ट्या च नाक्षत्रमहोरात्रं प्रकीर्तितम् ॥

भाषा—६ प्राण (स्वास) का एक पल, ६० पल का एक दण्ड, ६० दण्ड का एक नाक्षत्र अहोरात्र होता है ॥

सौरं सूर्यांशभोगेन, तिथ्या चान्द्रदिनं स्मृतम् ।
सूर्योदयद्वयान्तःस्थं कीर्त्यते सावनं दिनम् ॥

भाषा—सूर्य के एक अंश भोग करने से १ सौर दिन, तथा एक तिथि के १ चन्द्र दिन, और सूर्योदय से सूर्योदय पर्यन्त १ सावन दिन कहलाता है ॥

अथ दिननाम—

तानि सप्त-रविः सोमो मङ्गलश्च बुधस्तथा ।
बृहस्पतिश्च शुक्रश्च शनिश्चैव यथाक्रमम् ॥

भाषा—वे सावन दिन सात हैं—जैसे रवि, सोम, मंगल, बुध, बृहस्पति, शुक्र, शनि ये यथाक्रम से होते हैं ॥

रविवार में वर्जनीय—

तैलस्त्रीमद्यमांसानि यः करोति रवेर्दिने ।
सप्तजन्मसु रोगी स दरिद्रश्चैव जायते ॥

भाषा—रविवार में जो कोई तैल, स्त्री, मद्य, मांस का सेवन करता है वह सात जन्म तक रोगी और दरिद्र होता है ॥

रव्यादिवार में तैलफल--

तैलाभ्यङ्गे रवौ तापः सोमे शोभा कुजे मृतिः ।
बुधे धनं गुरौ हानिः शुक्रे दुःखं शनौ सुखम् ॥

भाषा--रविवार में तेल लगाने से ताप, सोम में शोभा, मंगल में आयुःक्षय, बुध में धन, बृहस्पति में हानि, शुक्र में दुःख, शनिवार में सुख होता है ।

परिहार--

रवौ पुष्पं गुरौ दूर्वा भौमवारे च मृत्तिका ।
गोमयं शुक्रवारे च तैले दत्वा न दोषभाक् ॥

भाषा--रविवार में पुष्प, गुरुवार में दूब, मंगल में मिट्टी, शुक्र में गोबर तैल में मिलाकर लगाने में दोष नहीं है ॥

अथ मासप्रकरण--

त्रिंशद्दिनैर्भवेन्मासश्चतुर्धा सोऽपि कीर्तितः ।
दर्शाद्दर्शावधिश्चान्द्रः संक्रान्त्या सौर उच्यते ॥
नाक्षत्रो भदिनैरेवं सावनः सावनैर्दिनैः ।
मेषादिस्थे रवौ यो यो मासश्चान्द्रः प्रपूर्यते ॥
राशीनां द्वादशत्वात्ते चैत्राद्या द्वादशैव हि ॥

भाषा--३० दिन (अहोरात्र) का एक मास होता है, वह चार प्रकार का है, जैसे--अमावास्या से अमावास्या तक ३० तिथियों का चान्द्र मास तथा संक्रान्ति से संक्रान्ति तक सौरमास । नाक्षत्र दिन से ३० दिन का नाक्षत्र मास और ३० सावन दिन का सावन मास

होता है । मेषादि द्वादश राशियों में सूर्य के रहने से जो जो चान्द्र मास पूरा होता है वेही चैत्रादि बारह मास होते हैं ॥

मासनाम—

मासाश्चैत्रश्च वैशाखो ज्येष्ठश्चाषाढसंज्ञकः ॥
श्रावणश्चैव भाद्राख्य आश्विनः कार्तिकस्तथा ।
मार्गशीर्षश्च पौषश्च माघश्च फाल्गुनस्तथा ॥

भाषा—चैत्र, वैशाख, ज्येष्ठ, आषाढ़, श्रावण, भाद्र, आश्विन, कार्तिक, मार्गशीर्ष, पौष, माघ, और फाल्गुन ये बारहों महीनों की संख्या है

अधिकमास—

यस्मिन् चान्द्रे न सङ्क्रान्तिः सोऽधिमासो निगद्यते ।
तत्र मंगलकार्याणि नैव कुर्यात् कदाचन ॥

भाषा—जिस चान्द्रमास में सूर्यकी सङ्क्रान्ति न हो वह अधिमास कहलाता है, उसमें कदापि शुभकार्य न करै ॥

अधिक (मल) मास पलटने के समय—

द्वात्रिंशता गतैर्मासैर्दिनैः षोडशभिस्तथा ।
घटिकानां चतुष्केण पतत्येकोऽधिमासकः ॥

भाषा—बत्तिस ३२ मास १६ दिन चार घड़ी पर एक एक अधिमास हुआ करता है ॥

क्षयमास—

यस्मिन् मासे द्विसङ्क्रान्तिः क्षयमासः स कथ्यते ।
तस्मिन् शुभानि कार्याणि यत्नतः परिवर्जयेत् ॥

भाषा--जिस मास में सूर्य की दो संक्रान्ति हों वह क्षयमास होता है, उसमें शुभकार्य वर्जित है ।।

विशेष—

तिथ्यर्धे प्रथमे पूर्वो द्वितीयेऽर्धे तथोत्तरः ।
मासाविति बुधैर्ज्ञेयौ क्षयमासस्य मध्यगौ ।।

भाषा—क्षयमास की तिथि के पूर्वार्ध में पूर्वमास और तिथि के उत्तरार्ध में अग्रिममास समझना चाहिये ।।

अर्थात् क्षयमास में तिथि के पूर्वार्ध में किसी का मरण आदि हो तो उसकी एकोदिष्टादिक क्रिया पूर्वमास की उसी तिथि में और उत्तरार्ध में मरणादि हो तो अग्रिम मास में उसका मरना समझा जायगा तथा अग्रिम मास ही में उसकी एकोदिष्टादि क्रिया होगी ।।

जन्ममास—

यस्मिंश्चन्द्रमसो मासे जन्मकृष्णादिके भवेत् ।
स जन्ममासो विज्ञेयश्चौलादौ तं विवर्जयेत् ।।

अर्थ--जिस कृष्णपक्षादि चान्द्रमास में जन्म हो वह जन्म-मास कहलाता है । वह चूड़ाकरणादि में वर्जित है ।।

ऋतु, अयन, वर्ष कथन—

ऋतुर्द्वाभ्यां च मासाभ्यां षड्भिर्मासैस्तथायनम् ।
मासैर्द्वादशभिः सौरैर्वर्षमेकं निगद्यते ।।

भाषा--दो मास का एक ऋतु, ६ मास का एक अयन और १२ मासों का १ वर्ष होता है ।।

अथ ऋतुनाम—

मृगादिराशिद्वयभानुभोगात्षडर्तवः स्युः शिशिरो वसन्तः ।
ग्रीष्मश्च वर्षा च शरच्च तद्वद्धेमन्तनामा कथितोऽपिषष्ठः ॥

भाषा—मकर आदि दो दो राशियों को सूर्य के भोग करने से शिशिर आदि ६ ऋतु होते हैं—जैसे—मकर कुम्भ के सूर्य में शिशिर, मीन मेष में वसन्त, वृष मिथुन में ग्रीष्म, कर्क सिंह में वर्षा, कन्या तुला में शरद्, वृश्चिक धनु के सूर्य में हेमन्त ॥

अथ अयननाम —

मृगादिषट्कराशिस्थे सूर्ये सौम्यायनं तथा ।
कर्कादिषड्भगे सूर्ये बुधैर्याम्यायनं स्मृतम् ॥

भाषा—मकर आदि ६ राशियों में सूर्य रहते हैं तो सौम्या-यन और कर्क आदि ६ राशियों में याम्यायन होता है ॥

पक्षनाम—

मासे शुक्लश्च कृष्णश्च द्वौ पक्षौ परिकीर्तितौ ।
सायं यत्रोदितश्चन्द्रः स शुक्लोऽन्यस्तु कृष्णकः ॥

भाषा—एक मास में शुक्ल और कृष्ण दो पक्ष होते हैं । जिस पक्ष में सायंकाल में चन्द्रमा उदित रहता है वह शुक्लपक्ष दूसरा कृष्णपक्ष कहलाता है ।

———

अथ तिथिप्रकरण

तिथिनाम—

प्रतिपच्च द्वितीया च तृतीया तदनन्तरम् ।
चतुर्थी पञ्चमी षष्ठी सप्तमी चाष्टमी तथा ॥
नवमी दशमी चैकादशी च द्वादशी तथा ।
त्रयोदशी ततः प्रोक्ता ततो ज्ञेया चतुर्दशी ॥
तिथिः पञ्चदशी शुक्ले पूर्णिमा परिकीर्त्यते ।
कृष्णे पञ्चदशी या च साऽमावास्यानिगद्यते ॥

भाषा—प्रतिपदा, द्वितीया, तृतीया, चतुर्थी, पञ्चमी, षष्ठी, सप्तमी, अष्टमी, नवमी, दशमी, एकादशी, द्वादशी, त्रयोदशी, चतुर्दशी और पञ्चदशी, (शुक्लपक्ष की पञ्चदशी पूर्णिमा और कृष्णपक्ष की पञ्चदशी अमावास्या कहलाती है)॥

तिथियों के स्वामी—

तिथीशोऽग्निर्विधिर्गौरी गणेशोऽहिर्गुहो रविः ।
शिवो दुर्गान्तको विश्वे हरिःकामःशिवःशशी ॥

भाषा—प्रतिपदा के अग्नि, २ के ब्रह्मा, ३ गौरी, ४ गणेश, ५ के सर्प, ६ के कार्तिकेय, ७ के सूर्य, ८ के शिव, ९ के दुर्गा, १० के यम, ११ के विश्वेदेव, १२ के विष्णु, १३ के कन्दर्प, १४ के महादेव, पूर्णिमा के चन्द्रमा और अमावास्या के स्वामी पितर हैं ॥

तिथि की नन्दादिक संज्ञा—

नन्दाख्या प्रतिपत् षष्ठी तथा चैकादशी स्मृता ।

भद्रासंज्ञा द्वितीया च सप्तमी द्वादशी तथा ॥
जयाख्या च तृतीया स्यादष्टमी च त्रयोदशी ।
तथा रिक्ता चतुर्थी च नवमी च चतुर्दशी ॥
पूर्णा पञ्चदशी प्रोक्ता पञ्चमी दशमी तथा ।
एवं पञ्चविधास्तिथ्यो नामतुल्यफलप्रदाः ॥

भाषा–दोहा–प्रतिपद ओ एकादशी, षष्ठी नन्दा जान ।
दूज सप्तमी, द्वादशी ये भद्रातिथि मान ॥
जया तृतीया अष्टमी, त्रयोदशी ये तीन ।
नवमी चौथ चतुर्दशी, है रिक्ता फलहीन ॥
पञ्चदशी अरु पञ्चमी, दशमी पूर्णा नाम ।
सब तिथियों के नाम सम, जानो फल परिणाम ॥

अथ नन्दादि तिथियों में कर्तव्य—

नन्दासु चित्रोत्सववास्तुतन्त्र क्षेत्रादि कुर्वीत तथैव नृत्यम् ।
विवाहभूषाशकटाध्वयाने भद्रासु चैतान्यपि पौष्टिकानि ॥

भाषा–नन्दातिथी में चित्रकर्म, उत्सव, वास्तु, तन्त्र, खेती, नाच-तमासा, विवाह, गाड़ी आदि वाहनों पर चढ़ना शुभ है । भद्रा तिथी में भी उपरोक्त कार्य शुभ है तथा पौष्टिककर्म भी करे ॥

जयासु संग्रामबलोपयोगिकार्याणि सिद्ध्यन्ति विनिर्मितानि ।
रिक्तासु तद्वद्वधबन्धनादिविषाग्निशस्त्राणि च यान्ति सिद्धिम् ॥

भाषा—जयातिथी में संग्राम के लिये उपयोगी कार्य सब सिद्ध होते हैं तथा रिक्ता में वध, बन्धन आदि, विष अग्नि सम्बन्धी शस्त्र बनाये हुए शुभ होते हैं ॥

पूर्णासु मांगल्यविवाहयात्रासपौष्टिकं शान्तिककर्म कार्यम् ।
सदैव दर्शे पितृकर्म मुक्त्वा नान्यद्विदध्याच्छुभमङ्गलानि ॥

भाषा--पूर्णा तिथी में मांगल्य, विवाह, यात्रा तथा पौष्टिक सहित शान्ति कर्म करे। परञ्च अमावास्या में केवल पितृकर्म छोडकर और कोई कार्य न करे ॥

अमावास्या के भेद--

सिनीवालीकुहूभेदादमावास्या द्विधा भवेत् ।
सा दृष्टेन्दुः सिनीवाली सा नष्टेन्दुकला कुहुः ॥

भाषा--अमावास्या के दो भेद हैं जिसमें चन्द्रमा की कला दृष्ट हो वह सिनीवाली और जिसमें चन्द्रमा की कला नष्ट रहे वह कुहू कहाती है ॥

सत् असत्तिथियाँ--

द्वादशी चैव दर्शश्च रिक्ता षष्ठी तथाऽष्टमी ।
असत्तिथ्यो बुधैः प्रोक्ताः शेषाः सत्तिथयः स्मृताः ॥

भाषा--१२, ३०, ४, ९, १४, ६, ८ ये असत्तिथियाँ हैं और बाकी (१, २, ३, ५, ७, १०, ११, १३, १५) ये सत्तिथियाँ हैं।

पर्वदिन—

अमावास्याष्टमी चैव पूर्णिमा च चतुर्दशी ।
एतानि पञ्च पर्वाणि रविसङ्क्रान्तिगं दिनम् ॥

भाषा--अमावास्या, अष्टमी, पूर्णिमा, चतुर्दशी, रविसङ्क्रान्ति-दिन ये ५ पर्वदिन हैं।

तिथि की संज्ञा आदि जानने का चक्र—

तिथि	१	२	३	४	५
संज्ञा	नन्दा	भद्रा	जया	रिक्ता	पूर्णा
स्वामी	अग्नि	ब्रह्मा	गौरी	गणेश	सर्प
शुक्ल	अशुभ				
कृष्ण	शुभ				

तिथि	६	७	८	९	१०
संज्ञा	नन्दा	भद्रा	जया	रिक्ता	पूर्णा
स्वामी	कार्तिकेय	सूर्य	शिव	दुर्गा	यम
शुक्ल	मध्यम				
कृष्ण	मध्यम				

तिथि	११	१२	१३	१४	१५	३०
संज्ञा	नन्दा	भद्रा	जया	रिक्ता	पूर्णा	पूर्णा
स्वामी	विश्वे	विष्णु	कंदर्प	शिव	चन्द्र	पितर
शुक्ल	शुभ					
कृष्ण	अशुभ					

अथ सिद्धियोग--

शुक्रे नन्दा बुधे भद्रा शनौ रिक्ता कुजे जया ।
गुरौ पूर्णा च दैवज्ञैः सिद्धियोगाः प्रकीर्तिताः ॥

भाषा--शुक्र में नन्दा, बुध में भद्रा, मंगल में जया, शनि में रिक्ता और गुरुवार में पूर्णा सिद्धि योग होते हैं ॥

अथ अमृतयोग—

रवौ सोमे तथा पूर्णा कुजे भद्रा गुरौ जया ।
तथा बुधे शनौ नन्दा शुक्रे रिक्तामृताऽह्वया ॥

भाषा--रवि और सोम में पूर्णा, मंगल में भद्रा, बृहस्पति में जया, शुक्र में रिक्ता तथा बुध और शनि में नन्दा ये अमृत योग हैं ।

अथ मृत्युयोग—

नन्दा रवौ कुजे चैव, भद्रा भार्गवसोमयोः ।
बुधे जया गुरौ रिक्ता शनौ पूर्णा च मृत्युदा ॥

भाषा--रवि और मंगल में नन्दा, शुक्र और सोम में भद्रा, बुध में जया, बृहस्पति में रिक्ता, शनिवार में पूर्णा ये मृत्युयोग हैं।

तिथियों में वर्ज्य--

तैलं विवर्जयेत् षठ्यामष्टम्यां मांसमेव च ।
क्षौरक्रिया चतुर्दश्यां दर्शे स्त्रीसेवनं तथा ॥

भाषा--षष्ठी में तैल, अष्टमी में मांस, चतुर्दशी में क्षौर, अमावास्या में स्त्री का सेवन न करे ॥

दोषपरिहार—

शनौ षष्ठ्यां स्मृतं तैलं महाष्टम्यां पलाशनम् ।
क्षौरं शुक्लचतुर्दश्यां दीपमाल्यां च मैथुनम् ॥

भाषा—शनिवार में षष्ठी हो तो तैल लगाने से, आश्विन शुक्ल महाष्टमी में मांस खाने में, शुक्लपक्ष की चतुर्दशी में क्षौर कराने में और दीपमालिका की अमावास्या में स्त्री संभोग करने में दोष नहीं है ।

अथ दग्ध तिथि—

मीने चापे द्वितीया च चतुर्थी वृषकुम्भयोः ।
मेषकर्कटयोः षष्ठी कन्यायां मिथुनेऽष्टमी ॥
दशमी वृश्चिके सिंहे द्वादशी मकरे तुले ।
एताश्च तिथयो दग्धाः शुभे कर्मणि वर्जिताः ॥

भाषा—मीन और धनुराशि में सूर्य रहें तो द्वितीया, वृष कुम्भ में ४, मेष कर्क में ६, कन्या मिथुन में ८, वृश्चिक सिंह में १०, मकर तुला में १२ ये दग्ध तिथियां शुभ कार्य में वर्जित हैं ॥

इति तिथि प्रकरण ।

अथ नक्षत्र प्रकरण

नक्षत्र नाम—

अश्विनी, भरणी, कृत्तिका, रोहिणी, मृगशिरा, आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य, ऽश्लेषा, मघा, पूर्वाफाल्गुनी, उत्त-

राफाल्गुनी, हस्त, चित्रा, स्वाती, विशाखा, अनुराधा, ज्येष्ठा, मूल, पूर्वाषाढा, उत्तराषाढा, (अभिजित्) * श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, पूर्वाभाद्रपदा, उत्तराभाद्रपदा, रेवती ॥

अश्विन्यादि नक्षत्रों के स्वामी—

दस्रो यमोऽनलो ब्रह्मा शशी रुद्रोऽदितिर्गुरुः ।
सर्पश्च पितरश्चैव भगश्चाथोर्यमा रविः ॥
त्वष्टा वायुश्च शक्राग्नी मित्रः शक्रश्च राक्षसः ।
जलं विश्वे विधिश्चैव विष्णुश्च वसुरम्बुपः ॥
अजपादस्त्वहिर्बुध्न्यः पूषा चैते यथाक्रमम् ।
अश्विन्यादिकभानां हि स्वामिनः परिकीर्तिताः ॥

भाषा—अश्विनी के स्वामी दस्र (अश्विनी कुमार) भरणी के यम, कृत्तिका के अग्नि, रोहिणी के ब्रह्मा, मृगशिरा के चन्द्रमा, आर्द्रा के शिव, पुनर्वसु के अदिति, पुष्य के गुरु, ऽश्लेषा के सर्प, मघा के पितर, पूर्वाफाल्गुनी के भग (सूर्य विशेष) उत्तराफाल्गुनी के अर्यमा (सूर्य विशेष), हस्त के रवि, चित्रा के त्वष्टा, स्वाती के वायु, विशाखाके इन्द्र और अग्नि दोनों, अनुराधा के मित्र, ज्येष्ठा के इन्द्र, मूल के राक्षस, पूर्वाषाढा के जल, उत्तराषाढा

---

* टिप्पणी—ताराविचार, राशिविचार आदि में अभिजित् की गणना नहीं होती है इसलिये नक्षत्र की संख्या २७ ही प्रसिद्ध है। कहा भी है "उत्तराषाढतुर्यांशः श्रुतिपञ्चदशांशकः । कथितं चाभिजिन्मानं पुराणगणकोत्तमैः ॥" अर्थात् उत्तराषाढ के अन्तिम चतुर्थांश श्रवण के आदि के पञ्चदशांश अभिजित् का मान है ॥

के विश्वेदेव, अभिजित के विधि, श्रवण के विष्णु, धनिष्ठा के वसु, शतभिषा के वरुण, पूर्वाभाद्रपदा के अजपाद, उत्तराभाद्रपदा के अहिर्बुध्न्य, रेवती के स्वामी पूषा हैं ॥

अथ नक्षत्र की ध्रुवादि संज्ञा—

उत्तरात्रयरोहिण्यो भास्करश्च ध्रुवं स्थिरम् ।
तत्र स्थिरं वीजगेहशान्त्यारामादिसिद्धये ॥

भाषा—तीनों उत्तरा, रोहिणी और रविवार ये ध्रुव और स्थिर संज्ञक हैं, इनमें स्थिर कार्य वीजवपन, शान्ति, वगीचा लगाना और आदि शब्द से मृदुसंज्ञक नक्षत्रोक्त कर्म सिद्ध होता है ।

स्वात्यादित्ये श्रुतेस्त्रीणि चन्द्रश्चापि चरं चलम् ।
तस्मिन् गजादिकारोहो वाटिका गमनादिकम् ॥

भाषा—स्वाती, पुनर्वसु, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा और सोमवार ये चर और चल संज्ञक हैं, इनमें हाथी आदि पर चढ़ना, वाटिका लगाना, यात्रा करना, आदि शब्द से लघुसंज्ञक नक्षत्र में कहा हुआ कर्म शुभ है ।

पूर्वात्रयं याम्यमघे उग्रं क्रूरं कुजस्तथा ।
तस्मिन् घाताग्निशाठ्यानि विषशस्त्रादि सिद्धयति ॥

भाषा—तीनों पूर्वा (पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वाषाढ, पूर्वाभाद्र) भरणी, मघा और मंगलवार ये क्रूरसंज्ञक हैं, इनमें घात कर्म, अग्निदाह, शठता, विप सम्बन्धि कर्म, शस्त्र, आदि शब्द से दारुण नक्षत्रोक्त कर्म शुभ हैं ॥

विशाखाग्नेयभे सौम्यो मिश्रं साधारणं स्मृतम् ।

तत्राग्निकार्यं मिश्रश्च वृषोत्सर्गादि सिद्धये ॥

भाषा—विशाखा कृत्तिका और बुधवार ये मिश्र और साधारण संज्ञक हैं, इनमें अग्नि सम्बन्धी कर्म, मिश्रित कार्य, वृषोत्सर्ग, आदि शब्द से उग्र नक्षत्रोक्त कर्म शुभ हैं ॥

हस्ताश्विपुष्याभिजितः क्षिप्रं लघु गुरुस्तथा ।
तस्मिन् पण्यरतिज्ञानं भूषाशिल्पकलादिकम् ॥

भाषा—हस्त, अश्विनी, पुष्य, अभिजित् और गुरुवार ये क्षिप्र और लघुसंज्ञक हैं, इनमें दुकान, रति, ज्ञान, शिल्प (चित्र-कारी) कला कर्म आदि ये चर नक्षत्रोक्त कर्म शुभ हैं ।

मृगान्त्यचित्रा मित्रर्क्षं मृदु मैत्रं भृगुस्तथा ।
तत्र गीताम्बरक्रीडामित्रकार्यं विभूषणम् ॥

भाषा—मृगशिरा, रेवती, चित्रा, अनुराधा और शुक्रवार ये मृदु और मैत्र नामक हैं, इनमें गीत, वस्त्र, क्रीडा, मित्र के कार्य और भूषण धारण करना शुभ है ।

मूलेन्द्राद्राहिभं सौरिस्तीक्ष्णं दारुणसंज्ञकम् ।
तत्राभिचारघातोग्रभेदाः पशुदमादिकम् ॥

भाषा—मूल, ज्येष्ठा, आर्द्रा, ऽश्लेषा और शनिवार ये तीक्ष्ण और दारुण संज्ञक हैं, इनमें अभिचार घात, पापकर्म, चुगलपन, पशुओं की शिक्षा आदि शब्द से वंधन आदि शुभ होते हैं ।

नक्षत्र की अन्धादि संज्ञा—

"अन्धाक्षं वसुपुष्यधातृजलभद्वीशार्यमान्त्याभिधं
मन्दाक्षं रविविश्वमित्रजलपाश्लेषाश्वि चान्द्रं भवेत् ।

मध्याक्षं शिवपित्रजैकचरणत्वाष्ट्रेन्द्रविध्यन्तकं
स्वक्षं स्वात्यदितिश्रवोदहनभाहिर्बुध्न्यरक्षोभगम् ॥"

भाषा—धनिष्ठा, पुष्य, रोहिणी, पूर्वाषाढा, विशाखा, उत्तराफाल्गुनी, रेवती ये अन्धसंज्ञक हैं। हस्त, उत्तराषाढ़ा, अनुराधा, शतभिषा, ऽश्लेषा, अश्विनी, मृगशिरा ये मन्दाक्ष हैं। आर्द्रा, मघा, पूर्वाभाद्र, चित्रा, ज्येष्ठा, अभिजित्, भरणी ये मध्यनेत्र हैं। स्वाती श्रवण, कृत्तिका उत्तराभाद्र, मूल, पूर्वाफाल्गुनी ये सुलोचन संज्ञक हैं।

प्रयोजन नष्ट लाभ ज्ञान—

विनष्टार्थस्य लाभोऽन्धे शीघ्रं मन्दे प्रयत्नतः ।
स्याद्दूरे श्रवणं मध्ये श्रुत्याप्ती न सुलोचने ॥

भाषा—अन्ध नक्षत्र में नष्ट हुई चीज शीघ्र मिलती है, मन्द नक्षत्रों में यत्न करने से, मध्य नक्षत्र में नष्ट वस्तु की खबर मात्र हो प्राप्ति नहीं हो, और सुलोचन नक्षत्रों में नष्ट हुई चीजों की खबर और प्राप्ति कुछ भी नहीं होती है ॥

अथ पञ्चक (भदवा)—

पञ्च भानि धनिष्ठातः पञ्चकं परिकीर्त्यते ।
गृहार्थं तृणकाष्ठानां संग्रहं तत्र वर्जयेत् ॥

भाषा—धनिष्ठादि पांच नक्षत्र पञ्चक कहलाता है, इन नक्षत्रों में गृह बनाने के लिये तृण काष्ठका संग्रह आदि न करै ॥

पञ्चक में मतान्तर—

न गच्छेद्दक्षिणामाशां पटके च श्रवणादिके ।

गृहार्थं तृणकाष्ठादेः शय्यादेः संग्रहं त्यजेत् ॥

भाषा—श्रवण आदि ६ नक्षत्रों में दक्षिणदिशाकी यात्रा गृह के लिये तृण काष्ठ का संग्रह और शय्या आदि बनवाना त्याग करे ॥

अथ परिहार—

"वस्वादौ शतभे मध्ये पूर्वादौ चोत्तरान्तके ।
पञ्च पञ्च घटीः प्राज्ञो रेवतीं सकलां त्यजेत् ॥

भाषा—धनिष्ठा के आदि की, शतभिषा के मध्य की, पूर्वाभाद्रपद के आदि की, उत्तराभाद्रपद के अन्त की पांच पांच घटी त्याज्य हैं और रेवती सम्पूर्ण त्याज्य है ॥

अथ वारनक्षत्रभव अमृतयोग—

हस्तः सूर्ये मृगश्चन्द्रे रेवती कुजवासरे ।
अनुराधा बुधे पुष्यो गुरुवारे तथैव च ॥
अश्विनी भृगुवारे च रोहिणी शनिवासरे ।
योगश्चामृतसंज्ञोऽयं प्राचीनैः परिकीर्तितः ॥

भाषा—रविवार में हस्त, सोम में मृगशिरा, मंगल में रेवती, बुध में अनुराधा, गुरुवार में पुष्य, शुक्र में अश्विनी, शनि में रोहिणी ये अमृतयोग हैं ॥

अथ शुभयोग—

मूलं रवौ पुष्य करोत्तराणि
वेधा मृगाङ्कः श्रवणा च सोमे ।

कृशानु पुष्योत्तर भानि भौमे
बुधाऽनुराधा वरुणः कृशानुः ॥
बृहस्पतौ पुष्यपुनर्वसू च
भगोऽश्विनी च श्रवणा च शुक्रे ।
शनैश्वरे स्वातिपितामहौ च
योगाः किलैते शुभदायिनः स्युः ॥

भाषा—रवि में मूल, पुष्य, तीनों उत्तरा, सोम में रोहिणी मृगशिरा और श्रवण, तथा मंगल में कृत्तिका पुष्य तीनों उत्तरा, बुध में अनुराधा शतभिषा कृत्तिका, बृहस्पति में पुष्य पुनर्वसु, शुक्र में पूर्वाफाल्गुनी अश्विनी श्रवण, शनैश्वर में स्वाती रोहिणी ये शुभ योग हैं ॥

अथ सर्वार्थसिद्धियोग—

सूर्येऽर्कमूलोत्तरपुष्यदास्रं
चन्द्रे श्रुतिब्राह्मशशीज्यमैत्रम् ।
भौमेऽश्व्यहिर्बुध्न्यकृशानुसार्पं
ज्ञे ब्राह्ममैत्रार्ककृशानुचान्द्रम् ॥
जीवेऽन्त्यमैत्राश्व्यदितीज्यधिष्ण्यं
शुक्रेन्त्यमैत्राश्व्यदितिश्रवोभम् ।
शनौ श्रुतिब्राह्मसमीरभानि
सर्वार्थसिद्ध्यै कथितानि पूर्वैः ॥

भाषा—रविवार में हस्त मूल तीनों उत्तरा पुष्य अश्विनी, चन्द्रवार में श्रवण रोहिणी मृगशिरा पुष्य अनुराधा, मंगलवार में

अश्विनी उत्तराभाद्र कृत्तिका आश्लेषा, बुधवार में रोहिणी अनुराधा कृत्तिका हस्त मृगशिरा, बृहस्पति में रेवती अनुराधा अश्विनी पुनर्वसु पुष्य, शुक्र में रेवती अनुराधा अश्विनी पुनर्वसु श्रवण, शनि में रोहिणी स्वाती श्रवण ये प्राचीनाचार्यों ने सर्वार्थसिद्धियोग कहे हैं ॥

अथ भवारोत्थ मृत्युयोग—

त्यज रविमनुराधे वैश्वदेवे च सोमं
शतभिषजि च भौमं चन्द्रजं चापि दस्रे ।
मृगशिरसि सुरेज्यं सर्पदेवे च शुक्रं
रविसुतमपि हस्ते मृत्युयोगाभिधानम् ॥

भाषा—रविवार में अनुराधा, सोम में उत्तराषाढा, मंगल में शतभिषा, बुध में अश्विनी, बृहस्पति में मृगशिरा, शुक्र में ऽश्लेषा, शनि में हस्त ये मृत्युयोग हैं। इसलिये इनका त्याग करना चाहिये।

अथ यमघंटयोग—

स्वाती मघा रवौ चन्द्रे पुष्यः श्लेषा तथैव च।
मंगले भरणी मैत्रं बुधे चार्द्रा तथार्यमा ॥
गुरौ च रेवती मूलं शुक्रे स्वाती च रोहिणी।
यमघण्टो बुधैः प्रोक्तः शतभं श्रवणा शनौ ॥

भाषा—रवि में स्वाती मघा, सोम में पुष्य, मंगल में भरणी अनुराधा, बुध में आर्द्रा उत्तराफाल्गुनी, बृहस्पति में रेवती मूल, शुक्र में स्वाती रोहिणी, शनि में शतभिषा श्रवण ये यमघण्ट हैं॥

अथ अशुभयोगपरिहार–

यमघण्टे त्यजेदष्टौ मृत्यौ द्वादशनाडिकाः ।
अन्येषु पापयोगेषु मध्याह्नात्परतः शुभम् ॥

भाषा—यमघण्ट में ८ घडी, मृत्युयोग में १२ घडी त्याग करे और दूसरे पापयोगों में मध्याह्न से पश्चात् शुभ होते हैं ॥

आनन्दादि अष्टाविंशतियोग जानने का प्रकार—

दास्त्रादर्के मृगादिन्दौ सार्पाद्भौमे कराद्बुधे ।
मैत्राद्गुरौ भृगौ वैश्वाद्गण्यां मन्दे च वारुणात् ॥

भाषा—रविवार में अश्विनी आदिक अभिजित् सहित २८ नक्षत्र आनन्द आदि २८ योग होते हैं, सोमवार में मृगशिरा से, मंगल में ऽश्लेषा से, बुध में हस्त से, गुरुवार में अनुराधासे, शुक्रवार में उत्तराषाढा से, और शनिवार में शतभिषा से गणना करना चाहिये ॥

अथ आनन्दादियोगनाम—

आनन्दाख्यः कालदण्डश्च धूम्रो
धाता सौम्यो ध्वांक्षकेतू क्रमेण ।
श्रीवत्साख्यो वज्रकं मुद्गरश्च
छत्रं मित्रं मानसं पद्मलुम्बौ ॥
उत्पातमृत्यू किल काणसिद्धी
शुभोऽमृताख्यो मुसलं गदश्च ।
मातङ्गरक्षश्चर सुस्थिराख्य–
प्रवर्धमानाः फलदाः स्वनाम्ना ॥

भाषा--आनन्द, कालदण्ड, धूम्र, धाता, सौम्य, ध्वांक्ष, केतु, श्रीवत्स, वज्र, मुद्गर, छत्र, मित्र, मानस, पद्म, लुम्ब, उत्पात, मृत्यु, काण, सिद्धि, शुभ, अमृत, मुसल, गद, मातङ्ग, रक्ष, चर, सुस्थिर, प्रवर्धमान ये २८ योग अपने नाम के तुल्य फल देने वाले हैं ॥

आनन्दादि योगों का फल—

सिद्धिर्मृत्युर्भयं सौख्यं शुभं चारिष्टमेव च ।
सिद्धिः शुभं कलिर्घातो मनोवाञ्छितजं फलम् ।
सौख्यं धनं शुभं कर्म हानिर्विघ्नं मृतिस्तथा ।
धनक्षतिर्धनप्राप्तिः सर्वसौख्यं तथैव च ॥
शुभं मानक्षयो रोगो वाहनं चाशुभं तथा ।
चालनं तोषणं वृद्धिरानन्दादिफलं क्रमात् ॥

भाषा--ये क्रमसे आनन्दादियोगों के फल हैं ।

योगजानने का उदाहरण—

जैसे—सोमवार में पुष्य नक्षत्र आनन्दादियोगों में कौनसा योग होगा तो यहां "मृगादिन्दौ" इस उपरोक्त नियम के अनुसार मृगशिरा से पुष्य तक गिनने से ४ चार हुआ तो आनन्दादि से चौथा धाता नामक योग हुआ। इसका फल सौख्य है, इसलिये सोमवार का पुष्य नक्षत्र शुभ हुआ। इसी प्रकार सब वारों में समझना ।

इति नक्षत्र प्रकरण ।

———०———

अथ योगप्रकरण ।

योग जानने की रीति ।

यस्मिन्नृक्षे स्थितो भानुर्यत्र तिष्ठति चन्द्रमाः ।
एकीकृत्य त्यजेदेकं योगा विष्कम्भकादयः ॥

भाषा—जिस नक्षत्र में सूर्य हो और जिस नक्षत्र में चन्द्रमा हो दोनों की संख्या के जोड़ में एक घटाकर विष्कम्भादिक योग होते हैं, सङ्ख्या यदि सत्ताइस २७ से अधिक हो तो २७ घटाकर शेष विष्कम्भादि योग समझना ॥

विष्कम्भादियोगनाम—

विष्कम्भः प्रीतिरायुष्मान्सौभाग्यः शोभनस्तथा ।
अतिगण्डः सुकर्माख्यो धृतिः शूलस्तथैव च ॥
गण्डो वृद्धिर्ध्रुवश्चैव व्याघातो हर्षणस्तथा ।
वज्रः सिद्धिर्व्यतीपातो वरीयान्परिघः शिवः ॥
सिद्धः साध्यः शुभः शुक्लो ब्रह्मेन्द्रौ वैधृतिस्तथा ।
सप्तविंशतियोगास्ते स्वनामफलदाः स्मृताः ॥

भाषा—विष्कम्भ, प्रीति, आयुष्मान्, सौभाग्य, शोभन, अतिगण्ड, सुकर्मा, धृति, शूल, गण्ड, वृद्धि, ध्रुव, व्याघात, हर्षण, वज्र, सिद्धि, व्यतीपात, वरीयान्, परिघ, शिव, सिद्धि, साध्य, शुभ, शुक्ल, ब्रह्म, ऐन्द्र, वैधृति, ये २७ योग अपने २ नाम के सदृश फल दायक हैं ।

अशुभयोगपरिहार—

विरुद्धयोगेषु सदाद्यपादः शुभेषु कार्येषु विवर्जनीयः ।

सवैधृतिस्तु व्यतिपातयोगःसर्वोऽप्यनिष्टःपरिघस्यचार्धम् ॥
तिस्रस्तु विष्कम्भकवज्रयोश्च व्याघातसंज्ञे नव पञ्च शूले।
गण्डातिगण्डे च षडेव नाड्यः शुभेषु कार्येषु विवर्जनीयाः ॥

भाषा--शुभकार्य में अशुभ योग का प्रथम चरण त्याग करना चाहिये, वैधृति और व्यतीपात समस्त वर्जनीय है। परिघ योग का पूर्वार्ध, तथा विष्कम्भ और वज्र योग के आदि की तीन तीन घड़ी, व्याघात में ९ घड़ी, शूल में ५ घड़ी, गण्ड अतिगण्ड में ६ घड़ी त्याग करना चाहिये ॥

इति योगप्रकरण।

अथ करणप्रकरण।

करणानयन--

"गततिथ्यो द्विनिघ्न्यश्च सप्तभक्ताश्च शेषकम्।
ववाद्यं करणं पूर्वभागे सैकं तथोत्तरे ॥

भाषा--शुक्लपक्ष की प्रतिपदा से गिनकर गत तिथि को २ से गुना करके सात का भाग देने से जो शेष बचे वे ववादिक करण वर्तमानतिथि के पूर्वार्ध में होते हैं और १ जोड़ने से उत्तरार्ध में करण होता है ॥

अथ करणनाम--

ववाह्वयं वालवकौलवाख्ये ततो भवेत्तैतिलनामधेयम्।
गराभिधानं वणिजं च विष्टिरित्याहुरार्याः करणानि सप्त ॥

भाषा--वव, वालव, कौलव, तैतिल, गर, वणिज और विष्टि ये सात चल करण हैं।

अथ स्थिरकरण——

स्थिराणि शकुनिर्नागं तृतीयं तु चतुष्पदम् ।
किंस्तुघ्नं तु चतुर्दश्याः कृष्णायाश्चापरार्धतः ॥

भाषा—कृष्णपक्ष की चतुर्दशी के उत्तरार्ध में शकुनि, अमावास्या के पूर्वार्ध में नाग, उत्तरार्ध में चतुष्पद और शुक्लपक्ष की प्रतिपदा के पूर्वार्ध में किंस्तुघ्न नामक करण होता है, ये चार स्थिर करण हैं।

ववादीनि ततः सप्त चराख्यकरणानि च ।
तिथ्यर्धभोगं सर्वेषां करणानां प्रकल्पयेत् ॥

भाषा—शुक्लपक्ष की प्रतिपदा के उत्तरार्ध से कृष्णपक्ष की चतुर्दशी के पूर्वार्ध पर्यन्त ववादिक ७ सातों चल करण महीने में आठ आवृत्ति करके भोग करते हैं। और तिथि के आधे सब करणों का मान है। स्पष्टार्थ नीचे चक्र देखो—

कृष्णपक्ष तिथि करण ज्ञान चक्र—

कृष्णपक्ष तिथि	१	२	३	४	५	६	७	
पूर्वार्ध—	वाल	तैति	वणि	बव	कौल	गर	विष्टि	
उत्तरार्ध	कौल	गर	विष्टि	वाल	तैति	वणि	वव	
कृष्णपक्ष तिथि	८	९	१०	११	१२	१३	१४	३०
पूर्वार्ध—	वालव	तैति	वणि	बव	कौल	गर	वि.	चतु.
उत्तरार्ध	कौल	गर	विष्टि	बाल	तैति	वणि	शकु	नाग

शुक्लपक्ष तिथि करण—

शुक्लपक्षतिथि	१	२	३	४	५	६	७	८
पूर्वार्ध	किंस्तु	वाल	तैति	वणि	वव	कौल	गर	विष्टि
उत्तरार्ध	वव	कौल	गर	विष्टि	वाल	तैति	वणि	वव

शुक्लपक्ष तिथि	९	१०	११	१२	१३	१४	१५
पूर्वार्ध	वाल	तैति	वणि	वव	कौल	गर	विष्टि
उत्तरार्ध	कौल	गर	विष्टि	वाल	तैति	वणि	वव

इन करणों में विष्टि (भद्रा) सर्वथा त्याज्य है, जैसे बृहस्पति का वचन—

विष्टिस्तु सर्वथा त्याज्या क्रमेणैवागता तु या।
अक्रमेणागता भद्रा सर्वकार्येषु शोभना॥

भाषा—क्रम से आई हुई भद्रा (अर्थात् पूर्वार्ध की भद्रा दिन में और परार्ध की भद्रा रात्रि में) सब शुभ कार्यों में त्याज्य है तथा अक्रम से आई हुई (अर्थात् पूर्वार्ध की भद्रा रात्रि में और उत्तरार्ध की भद्रा दिन में) सब कार्यों में शुभ होती है।

भद्राज्ञान—

शुक्ले पूर्वार्धेऽष्टमीपञ्चदश्योर्भद्रैकादश्यां चतुर्थ्यां परार्द्धे।
कृष्णेन्त्यार्धेस्यात्तृतीयादशम्योः पूर्वेभागे सप्तमी शम्भुतिथ्योः

भाषा—शुक्लपक्षकी अष्टमी और पूर्णिमा के पूर्वार्ध में, और एकादशी चतुर्थी के उत्तरार्ध में भद्रा रहती है। तथा कृष्णपक्ष

की तृतीया दशमी के उत्तरार्ध में और सप्तमी चतुर्दशीके पूर्वार्ध में भद्रा रहती है ॥

भद्रा में अवश्य वर्जनीय—

"भद्रायां द्वे न कर्तव्ये, श्रावणी फाल्गुनी तथा ।
श्रावणी नृपतिं हन्ति ग्रामं दहति फाल्गुनी ॥

भाषा—भद्रा में श्रावणी (रक्षा बन्धन आदि) और फाल्गुनी (होलिकादाहादि) न करे । क्योंकि भद्रा में श्रावणी करने से राजाओं का नाश, और फाल्गुनी करने से ग्राम में अग्निभय होता है ॥

परिहार—

"कुम्भकर्कद्वये मर्त्ये स्वर्गेऽब्जेऽजात्त्रयेऽलिगे ।
स्त्रीधनुर्जूकनक्रेऽधो भद्रा तत्रैव तत्फलम् ॥"

भाषा—कुम्भ, मीन, कर्क, सिंह इन राशियों के चन्द्रमा में मृत्युलोक में, और मेष, वृष, मिथुन और वृश्चिक के चन्द्रमा में स्वर्ग में तथा कन्या, धन, तुला और मकर के चन्द्रमा में पाताल में भद्रा रहती है । जहाँ रहती है वहाँ ही फल देती है ॥

इति करणप्रकरण—

—:※:—

अथ सम्वत्सरप्रकरण ।

वार्हस्पत्यमान और वर्षशुद्धि—

"मध्यगत्या भभोगेन गुरोर्गौरववत्सरः" ।
संहितायामिति प्रोक्तं वसिष्ठादि महर्षिणा ॥

भाषा—बृहस्पति की मध्यमगति से एक राशि का भोग संवत्सर कहाता है। ऐसा संहिता में वसिष्ठादिमुनियों ने कहा है।

स्फुटेज्येऽजादिगे यो यो वत्सरः परिपूर्यते।
सृष्टितो विजयाद्यास्तेऽथवा चाश्विनपूर्वकाः ॥

भाषा—मेषादि राशि में स्पष्टगुरु के रहने पर जो जो संवत्सर पूर्ण होता है वे ही सृष्ट्यादि से विजय, अथवा आश्विन आदिक-संवत्सर होते हैं, जिनके फल पञ्चाङ्ग में लिखे जाते हैं।

देशभेद से वर्षमान—

नर्मदोत्तरभागे तु वार्हस्पत्येन वत्सरः ॥
तस्यास्तु दक्षिणेभागे सौरमानेन वर्तते ॥

भाषा—नर्मदा के उत्तरभाग के देशों में वार्हस्पत्य (प्रभवादि) संवत्सर और दक्षिण भाग में सौर (मेषसंक्रान्ति से मेषसंक्राति तक) संवत्सर फलादि में ग्रहण किया जाता है।

शुद्धसम्वत्सर—

यत्रैवराशिसञ्चारो भवेन्मार्गगतेर्गुरोः ।
शुद्धः संवत्सरः स स्यात्सर्वेषां च शुभप्रदः ॥

भाषा—जिस बार्हस्पत्य संवत्सर में स्पष्टगुरु का मार्गगत्या एक राशि सञ्चार हो वह शुद्ध वर्ष सबके लिये शुभप्रद है।

अतिचार और लुप्तवर्ष—

यत्र वर्षे द्विचारः स्यादतीचारः स उच्यते ।
तदा कर्म शुभं त्याज्यमष्टाविंशतिवासरान् ॥

भाषा—जिस संवत्सर में मार्गगतिगुरु का दो राशि में संचार

हो वह अतिचार कहाता है । उसमें २८ दिन पर्यन्त शुभ कर्म का त्याग करना चाहिये ॥

वर्षान्ते च पुनर्वक्रो भूत्वाऽऽगच्छति पूर्वभम् ।
तदा लघ्वतिचारः स्यादन्यथा लुप्तवत्सरः ॥
यस्मिन्राशौ स्फुटेज्यस्य वत्सरान्तो न जायते ।
तद्राशिवत्सरस्यैव नाम्नो लोपः प्रजायते ॥

भाषा—अतिचार होने पर भी स्पष्टगुरु यदि वक्री होकर संवत्सरान्तकाल में फिर पूर्वराशि में रहे तो लघ्वतिचार होता है । अन्यथा-(अर्थात् यदि पूर्वराशि में न आवे, अथवा आकर भी फिर वर्षान्तकाल से पूर्वही अग्रिम राशिमें चला जाय तो) लुप्तवत्सर होता है ।

महातिचारसंज्ञं तं लुप्तं संवत्सरं त्यजेत् ।
वत्सरारम्भतः पञ्चचत्वारिंशद्दिनानि वा ॥

भाषा—लुप्तसंवत्सर का ही नाम महातिचार भी है । उस वर्ष को शुभकर्म में त्याग देना चाहिये । अथवा आवश्यक में आदि से ४५ दिन त्यागकर शेष में कर्म करना चाहिये ॥

दाक्षिणात्यों के मत से लुप्तवर्ष—

यत्र जीवाब्दयुग्मस्य सौराब्देविरतिर्भवेत् ।
लुप्तवर्षं तदा तत्र ज्ञेयं ज्योतिषवेदिभिः ॥

भाषा—जिस सौरवर्ष में दो बार्हस्पत्य वत्सर का अन्त हो वह दक्षिणदेश में लुप्तवर्ष समझा जाता है ॥

कुत्रचिच्चान्द्रमानेन वत्सरः परिगृह्यते ।
एवमेव च तत्रापि विज्ञेयो लुप्तवत्सरः ॥

भाषा--कहीं कहीं चान्द्रमान (चैत्रान्त) से वर्ष ग्रहण किया जाता है । वहाँ भी इसी प्रकार (वर्ष के भीतर दो वार्हस्पत्य वर्ष के अन्त होने से) लुप्तवर्ष समझना ॥

वार्हस्पत्य वर्षों के नाम—

विजय	विश्वावसु	पिंगल	शुक्ल	वृष	मेष
जय	पराभव	कालयुक्त	प्रमोद	चित्रभानु	वृष
मन्मथ	प्लवङ्ग	सिद्धार्थी	प्रजापति	सुभानु	मिथुन
दुर्मुख	कीलक	रौद्र	अङ्गिरा	तारण	कर्क
हेमलम्ब	सौम्य	दुर्मति	श्रीमुख	पार्थिव	सिंह
विलम्ब	साधारण	दुन्दुभी	भाव	व्यय	कन्या
विकारी	विरोधकृ.	रुधिरोद्गा	युवा	सर्वजित्	तुला
शर्वरी	परिधावी	रक्ताक्ष	धाता	सर्वधारी	वृश्चिक
प्लवः	प्रमादी	क्रोधन	ईश्वर	विरोधी	धनु
शुभकृत्	आनन्द	क्षय	बहुधान्य	विकृत	मकर
शोभकृत्	राक्षस	प्रभव	प्रमाथी	खर	कुम्भ
क्रोधी	नल	विभव	विक्रम	नन्दन	मीन

अथ अवकहडा चक्रोद्धार-

शतपदचक्रानुसार नक्षत्र चरण--

चू चे चो ला, पदा दास्रे, ली लू ले लो, तु याम्यभे ।
अ ई ऊ ए कृत्तिकायां, ओ वा वी वू च धातृभे ॥
वे वो का को मृगे प्रोक्ताः कू घ ङ छ च रुद्रभे ।

के को हा ही तथादित्ये, हू हे हो डा तु पुष्यभे ॥
डी डू डे डो तथा सार्पे, मा मी मू मे तु पित्र्यभे ।
मो टा टी टू पदा भाग्ये, टे टो पाप्यर्यमर्क्षके ॥
पू ष ण ठ तथा हस्ते, पे पो रा री तु त्वाष्ट्रभे ।
रू रे रोता पदाः स्वातौ ती तू ते तो द्विदैवते ॥
ना नी नू ने पदा मैत्रे, नो या यी यू तथैन्द्रभे ।
ये यो भा भी पदा मूले, भू धा फा ढा जलर्क्षके ॥
भे भो जा जी तु वैश्वर्क्षे, जू जे जो खाऽभिजित्पदाः ।
खी खू खे खो श्रुतौ ज्ञेयाः गा गी गू गे तु वासवे ॥
गो सा सी सू जलेशर्क्षे से सो दाद्यजपादभे ।
दु थ झ ञो त्तराभाद्रे दे दो चा ची तथाऽन्त्यभे ॥

भाषा--चू चे चो ला अश्विनी, ली लू ले लो भरणी, अ ई उ ए कृत्तिका, ओ वा वि वू रोहिणी, वे वो का की मृगशिरा, कू घ ङ छ आर्द्रा, के को हा ही पुनर्वसु, हू हे हो डा पुष्य, डी डू डे डो ऽश्लेषा, मा मी मू मे मघा, मो टा टी टू पूर्वफाल्गुनी, टे टो पा पी उत्तरफाल्गुनी, पू ष ण ठ हस्त, पे पो रा री चित्रा, रु रे रो ता स्वाती, ती तू ते तो विशाखा, ना नी नू ने अनुराधा, नो या यी यू जेष्ठा, ये यो भा भी मूल, भू धा फा ढा पूर्वाषाढा, भे भो जा जी उत्तराषाढा, जू जे जो खा अभिजित्, खी खू खे खो श्रवण, गा गी गू गे धनिष्ठा, गो सा सी सू शतभिषा, से सो दा दी पूर्वाभाद्रपदा, दू थ झ ञ उत्तराभाद्रपदा, दे दो चा ची रेवती, इस प्रकार एक नक्षत्र में चार चार चरण हैं ॥

जिस नक्षत्र के जिस चरण में जन्म हो उस चरण में जो वर्ण पठित हैं वही अक्षर नाम के आदि में रखना चाहिये, जैसे—मृगशिरा नक्षत्र के ३ तृतीय चरण में किसी का जन्म हुआ तो मृगशिर के तृतीय चरण में ककार है इसलिये ककारादि नाम रखना चाहिये, जैसे—'कमलाकान्त' 'कालीदत्त' 'कन्तलाल' इत्यादि ऐसे सब नक्षत्र में समझना ॥

कोई कोई कहते हैं कि—"आर्द्रा के तृतीय चरण, हस्त के तृतीय चरण और उत्तराभाद्रपदा के चतुर्थ चरण में किसी का जन्म हो तो क्रमसे ङकार, णकार तथा ञकार नाम के आदि अक्षर में पड़ेंगे, परञ्च ऐसा नाम कोई नहीं मिलता है । इसलिये ङकार के स्थान में गकार और ञकार के स्थान में जकार और णकार के स्थान में डकार ग्रहण करना चाहिये अर्थात् आर्द्रा के तृतीय चरण में जन्म वाले का गकाराद्यक्षर (गजानन, गणपति इत्यादि) नाम रखना चाहिये" किन्तु उन लोगों का ऐसा कहना भ्रम है क्योंकि ऐसे करने से आर्द्रा तृतीय चरण में जन्मवालों का धनिष्ठा के प्रथम चरण का सन्देह होगा । इसलिये आर्द्रा तृतीय चरण वाले का ङकाराद्यक्षर, और हस्त तृतीय चरण वाले का णकाराद्यक्षर, तथा उत्तराभाद्रपदा के चतुर्थ चरण वाले का ञकाराद्यक्षर ही जन्म नाम समझना चाहिये, पुकारने के लिये कोई दूसरा नाम रख लेना चाहिये ।

उपरोक्त भ्रम का मूल—

नरपतिजयचर्या आदि स्वरग्रन्थ में नाम के आद्यक्षर से वर्ण स्वर, मात्रा स्वर आदि का विचार किया जाता है, वहां 'ङ, ञ,

ण" इन तीनों वर्णों का ग्रहण नहीं किया गया है, क्योंकि ये पुकार के नाम के आदि में नहीं देखे जाते हैं इसलिये लिखा है--

न प्रोक्ता ङ ञ णा वर्णा नामादौ सन्ति ते नहि ।
चेद्भवन्ति तदा ज्ञेया गजडास्ते यथाक्रमम् ॥

अर्थ--वर्ण स्वर चक्र में "ङ ञ ण" ये वर्ण नहीं कहे गये हैं क्योंकि ये तीनों वर्ण नाम के आदि में नहीं पाये जाते हैं--अगर किसी नाम के आदि में हों तो वहाँ ङकार के जगह गकार, ञकार के स्थान में जकार तथा णकार के स्थान में डकार समझना चाहिये । यह स्वर विचार में कहे हैं ।

किन्तु इसका अर्थ कितने अनभिज्ञ उलटा समझकर शतपद चक्रानुसार नामकरण में लगाते हैं, वह मानने योग्य नहीं है ।

नाम के आदि अक्षर से नक्षत्र का ज्ञान--

यन्नामाद्यक्षरं यस्य नक्षत्रस्य पदे भवेत् ।
तदेव तस्य नक्षत्रं विज्ञेयं गणकोत्तमैः ॥

भाषा--नाम का प्रथम अक्षर जिस नक्षत्र के चरण में हो वही उसका नक्षत्र समझना चाहिये ।

उदाहरण--जैसे "गजानन" का नक्षत्र कौन है ? यहाँ नाम के आदि में 'ग' कार है, वह धनिष्ठा के प्रथम चरण में है, इसलिये 'गजानन' नाम का धनिष्ठा नक्षत्र हुआ ।

यदि नाम्नि भवेद्वर्णः संयुक्ताक्षरलक्षणः ।
ग्राह्यस्तदादिमो वर्ण इत्युक्तं ब्रह्मयामले ॥

भाषा--यदि नाम के आदि में संयुक्ताक्षर हो तो उनमें प्रथम वर्ण का ग्रहण करना चाहिये ॥

उदाहरण--जैसे--'श्रीपति' नाम के आदि में संयुक्त वर्ण 'श्र' के प्रथम वर्ण 'श' कार है वह शतभिषा के द्वितीय चरण में है इसलिये श्रीपति का नक्षत्र शतभिषा हुआ ॥

अनुक्तत्वादृकारस्य रेफो ग्राह्यो विचक्षणैः ।
ऋद्धिनाथस्य नक्षत्रं यथा चित्राख्यमेव हि ॥

भाषा--शतपद चक्र में ऋकार नहीं कहा गया है, इसलिये ऋकार के स्थान में रेफ (र) ग्रहण करना चाहिये ॥

जैसे 'ऋद्धिनाथ' नाम के आदि अक्षर 'ऋ' कार के स्थान में 'र' ग्रहण करके चित्रा नक्षत्र का तृतीय चरण सिद्ध हुआ ॥

तथा च—

अ आ, इ ई, उ ऊ, ए ऐ, ओ औ, द्वौ द्वौ मिथः समौ ।
ब वौ, शसौ तथैवात्र ज्ञेयौ दैवविदां सदा ॥

भाषा-शतपदचक्र में अकार और, आकार, तथा इकार और ईकार, उकार और ऊकार तथा एकार और ऐकार, एवं ओकार और औकार परस्पर तुल्य समझे जाते हैं, तथा बकार और वकार, शकार और सकार ये दो दो अक्षर तुल्य समझना चाहिये। जैसे 'अमरनाथ' और आदित्यप्रसाद दोनों का एक ही (कृत्तिका) नक्षत्र का प्रथम चरण हुआ, ऐसे ही 'शक्तिनाथ' और सन्तलाल शतभिषा नक्षत्र का द्वितीय चरण हुआ, । ऐसे ही और भी समझना है ।

अथ राशिपरिभाषा--

कलास्याद्विकलाषष्ठ्या तत्षष्ठ्या चांश उच्यते ।
त्रिंशदंशैर्भवेद्राशिर्भगणो द्वादशैव ते ॥

भाषा--६० विकला की १ कला, ६० कला का १ अंश, ३० अंश की १ राशि और १२ राशियों का १ भगण होता है ॥

राशि नाम--

मेषो वृषोऽथ मिथुनं कर्कः सिंहश्च कन्यका ।
तुला च वृश्चिकश्चैव धनुश्च मकरस्तथा ॥
कुम्भो मीनस्तथा ज्ञेया राशिसंज्ञा यथाक्रमम्

भाषा—मेष, वृष, मिथुन, कर्क, सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक, धनु, मकर, कुम्भ, मीन ये क्रमसे बारहों राशि के नाम हैं ॥

नक्षत्र से राशि जानने का प्रकार--

एकैकस्मिंस्तथा राशौ नक्षत्रचरणा नव ॥

भाषा--एक एक राशि में नौ नौ चरण होते हैं ॥

यथा—

मेषोऽश्विनी च भरणी कृत्तिकैकपदन्तथा ।
कृत्तिकाङ्घ्रित्रयं ब्राह्मं मृगार्धं वृष उच्यते ॥
मिथुनं मृगार्धमार्द्रा च पुनर्वसुपदत्रयम् ।
पुनर्वसुपदैकं तु पुष्यःऽश्लेषा च कर्कटः ॥
सिंहो मघा च पूर्वा स्यादुत्तरैकपदं तथा ।
उत्तराङ्घ्रि त्रयं हस्तश्चित्रार्धं चैव कन्यका ॥
तुला चित्रादलं स्वाती विशाखा चरणत्रयम् ।
विशाखैकपदं मैत्रं ज्येष्ठा सर्वा च वृश्चिकः ॥
मूलं पूर्वोत्तराषाढापदमेकं धनुस्तथा ।

उत्तराङ्घ्रित्रयं कर्णो धनिष्ठार्धं मृगस्तथा ॥
धनिष्ठार्धं शतभिषा पूर्वापादत्रयं घटः ।
मीनः पूर्वापदैकं स्यादुत्तरा रेवती तथा ॥

भा.—चौ.—

असुनी भरणी पद निःशेष, कृतिका एक चरण है मेष ।
कृतिका तीन रोहिणी चार, दो पद मृगशिर वृषभ उचार ॥
मृगशिर दोपद आर्द्राचार, तीन पुनर्वसु मिथुन विचार ।
एक पुनर्वसु पुष्यश्लेष, जानो कर्कट राशि विशेष ॥
मघा पूर्व उत्तर पद एक, सिंह राशि का करो विवेक ।
उत्तर तीन सकल पद हस्त, दो चित्रा कन्या परशस्त ॥
दो चित्रा स्वाती समतूल, तीन विशाखा पद है तूल ।
एक विशाखा पद अनुराध, जेष्ठा है वृश्चिक निर्बाध ॥
मूल पूर्व उत्तरपद एक, धनुष राशि पर करो विवेक ।
उत्तर तीन श्रवण पद वेद, दोय धनिष्ठा मकर विभेद ॥
दोय धनिष्ठा शतभिषचार, पूर्वा तीन कुम्भ निर्धार ।
पूर्वा एक उत्तराचार, सकल रेवती मीन विचार ॥

उदाहरण—जैसे विचार करना है कि "अनिरुद्ध चौधरी" की कौन राशि है तो यहाँ नाम के आदि का अक्षर अकार है तथा अकार कृत्तिका के प्रथम चरण में है, उपरोक्त पद्यानुसार कृत्तिका के प्रथम चरण की मेष राशि है इसलिये "अनिरुद्ध चौधरी" की मेष राशि हुई, इसी प्रकार सर्वत्र समझना, विशेष स्पष्ट के लिये नीचे चक्र देख के समझ लेना ।

राशि की पुं-स्त्री आदि संज्ञा—

पुँस्त्री क्रूराक्रूरौ चरस्थिरद्विस्वभावसंज्ञाः स्युः ।
क्षत्रिय-वैश्यक-शूद्र-ब्राह्मणवर्णाः क्रमादजाद्या स्ते ॥

अर्थ—मेषादिक बारहों राशि क्रमसे पुरुष; स्त्री, अशुभ; शुभ, तथा चर, स्थिर, द्विस्वभाव, और क्षत्रिय, वैश्य शूद्र, ब्राह्मण वर्ण हैं ।

नाम के आदि अक्षर से राशि जानने का चक्र ।

	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२
अक्षर	चू	इ	क	हि	मा	टो	रा	तो	ये	भो	गु	दी
	चे	उ	कि	हु	मि	प	रि	न	यो	जजो	गे	दू
	चो	ए	कु	हे	मू	पि	रू	नि	भ	जूजे	गो	थ
	ल	ओ	घ	हो	मे	पु	रे	नू	भि	जोखा	सा	झ
	लि	वा	ङ	डा	मो	ष	रो	ने	भु	खि	सि	ञ
	लू	वि	छ	डि	टा	ण	ता	नो	धा	खु	सू	दे
	ले	वू	के	डू	टि	ठ	ति	या	फा	खे	से	दो
	लो	वे	को	डे	टू	पे	तू	यि	ढा	खोग	सो	च
	अ	वो	ह	डो	टे	पो	ते	यू	भे	गि	दा	ची

शुभाशुभ	पुँ० स्त्री	चरादिसंज्ञा	स्वामी	राशि
अशुभ	पुरुष	चर	मंगल	मेष
शुभ	स्त्री	स्थिर	शुक्र	वृष
अशुभ	पुरुष	द्विस्वभाव	बुध	मिथुन
शुभ	स्त्री	चर	चन्द्र	कर्क
अशुभ	पुरुष	स्थिर	रवि	सिंह
शुभ	स्त्री	द्विस्वभाव	बुध	कन्या
अशुभ	पुरुष	चर	शुक्र	तुला
शुभ	स्त्री	स्थिर	मंगल	वृश्चिक
अशुभ	पुरुष	द्विस्वभाव	बृहस्पति	धन
शुभ	स्त्री	चर	शनि	मकर
अशुभ	पुरुष	स्थिर	शनि	कुम्भ
शुभ	स्त्री	द्विस्वभाव	बृहस्पति	मीन

विशेष--राशि विचार में अभिजित् की गणना नहीं की जाती है क्योंकि अभिजित् का भोग उत्तराषाढा और श्रवण के अन्तर्गत है। इस लिये अभिजित् के 'जू जे जो' ये तीनों चरण उत्तराषाढ़ा में और चौथा चरण (ख) श्रवण में मानकर मकर राशि मानी जाती है ॥

अथ राशि स्वामी—

सिंहस्याधिपतिः सूर्यः कर्कस्याधिपतिः शशी ।

मेषवृश्चिकयोर्भौमः कन्यामिथुनयोर्बुधः ॥
जीवो मीनधनुःस्वामी शुक्रो वृषतुलाधिपः ।
मृगकुम्भपतिः सौरिः कथितो गणकोत्तमैः ॥

भाषा—सिंह के स्वामी सूर्य, कर्क के चन्द्रमा, मेष; वृश्चिक के मङ्गल, मिथुन; कन्या के बुध, धनु; मीन के बृहस्पति, वृष; तुला के शुक्र और मकर; कुम्भ के स्वामी शनि हैं ॥

शंका—यहाँ शंका है कि ग्रहों में सूर्य और चन्द्रमा, प्रधान होकर एक एक राशि के स्वामी और कुजादि पांचों ग्रह दो दो राशियों के स्वामी क्यों हुए ? ।

इसके उत्तर में प्राचीन वचन है—

सिंहादिषट्कस्य पतिर्दिनेशःकर्कादिषट्कस्य पतिर्निशेशः ।
ताभ्यां प्रदत्तं च कुजादिकेभ्य एकैकमस्माद्द्विगृहाधिपास्ते

भाषा—सिंह से (आगे की) ६ राशियों के स्वामी सूर्य, कर्क से लेकर (पीछे की) ६ राशियों के स्वामी चन्द्रमा थे ! ये दोनों मङ्गलादिक पाँचों ग्रहों को एक एक राशि दिये। इस लिये सूर्य और चन्द्रमा को एक एक बची और मंगलादिक को दो दो राशियाँ हुईं॥

अथ ताराविचार—

जन्मभादिनभं यावत् सङ्ख्यैव नवतष्टिता ।
तारा तत्राद्यपश्चाद्रित्रिसङ्ख्या न शुभप्रदाः ॥

भाषा—जन्म नक्षत्र से दिन नक्षत्र पर्यन्त गिनकर जो संख्या हो उसमें नौ का भाग देने से जो शेष बचे वही तारा होती है । उनमें १,३,५,७, वीं तारायें शुभ नहीं होतीं अर्थात् २,४,६,८,९, वीं तारायें शुभ हैं ॥

उदाहरण--जैसे बाबू "शिवशङ्कर" चौधरी को पुनर्वसु नक्षत्र में पश्चिम दिशा की यात्रा करनी है तो-यहां नाम के आद्य अक्षर (शि) के अनुसार जन्मनक्षत्र शतभिषा हुआ, इस लिये शतभिषा से दिन के नक्षत्र (पुनर्वसु) तक गिनने से ११ हुए, इन में ९ का भाग देने से २ वचा अर्थात् दूसरी तारा हुई, दूसरी शुभ है। इसी प्रकार और भी समझना।

अथ तारानाम—

जन्माख्यसम्पद्विपदः क्षेमप्रत्यरिसाधकाः।
वधमैत्रातिमैत्राख्यास्तारा नामसदृक्फलाः॥

भाषा—जन्म, सम्पत, विपत, क्षेम, प्रत्यरि, साधक, वध, मैत्र, अतिमैत्र, ये तारायें अपने २ नाम तुल्य फल देती हैं॥

विशेष—

प्रथमे च द्वितीये च पर्यये प्रत्यरिः शुभः।
जन्मतारा विवाहादौ माङ्गल्ये च शुभा स्मृताः॥

अर्थ—प्रथम और द्वितीय आवृत्ति की प्रत्यरि ५ वीं तारा शुभ है, और जन्मकी तारा तीनों आवृत्ति की विवाहादि शुभ कार्य में शुभ है।

दुष्ट तारा की शान्ति—

प्रत्यरौ लवणं दद्यात् शाकं दद्यात् त्रिजन्मसु।
गुडं विपत्तितारायां वधे च तिलकाञ्चनम्।

भाषा--(आवश्यक कार्य में) प्रत्यरि (५) तारा में लवणदान करे। जन्म (१) तारा में शाक, विपत् (३) तारा में

गुड़, और वध (७) तारा में तिल और सुवर्ण दान करे तो शुभ होता है ॥

अथ चन्द्रविचार--

जन्मराशिं समारभ्य या सङ्ख्या चन्द्रभावधिः ।
चन्द्रस्तत्सङ्ख्यको ज्ञेयस्तथा च तत्फलं वदेत् ॥

भाषा--जन्मराशि से इष्ट दिन की चन्द्र राशि पर्यन्त गिनने से जो सङ्ख्या हो तत्सङ्ख्यक चन्द्रमा समझना और तदनुसार उसका फल कहना ॥

अथ चन्द्रफल—

आद्ये चन्द्रे शुभं ज्ञेयं मनस्तोषं द्वितीयके ।
तृतीये धनसम्पतिश्चतुर्थे कलहागमः ॥
पञ्चमे ज्ञानवृद्धिः स्यात्षष्ठे धान्यधनागमः ।
सप्तमे राज सम्मानमष्टमे प्राणसंशयः ॥
नवमे धर्मलाभः स्यात् सिद्धिस्तु दशमे भवेत् ।
एकादशे जयो नित्यं द्वादशे सर्वथा क्षतिः ॥

भाषा---१ प्रथम चन्द्र में शुभ, २ में मानस तुष्टि, ३ में धन सम्पत्ति, ४ में कलह (लड़ाई), ५ में ज्ञानकी वृद्धि, ६ में धन धान्य प्राप्ति, ७ में राजा से सम्मान, ८ में प्राणसंशय, ९ में धर्मलाभ, १० में सिद्धि, ११ में जय लाभ और १२ वें चन्द्रमा में सर्वथा हानि होती है ॥

चन्द्रमा जानने का उदाहरण--जैसे बाबू "जगन्नाथ" चौधरी को रोहिणी नक्षत्र वृषराशि के चन्द्रमा में पूर्वदिशा की यात्रा करनी है तो नामाद्यक्षर (ज) के अनुसार जन्मराशि मकर हुई ।

मकर से इष्ट दिन की वृष राशि पर्यन्त गिनने से ५ वां चन्द्रमा सिद्ध हुआ । पांचवें चन्द्रमा का फल ज्ञान की वृद्धि है । इसलिये शुक्लपक्ष में पांचवां चन्द्रमा शुभ हुआ । ऐसे ही सर्वत्र जानना ॥

विशेष—

कृष्णपक्षे द्वितीयस्तु पञ्चमो नवमोऽशुभः ।
कृष्णे बलवती तारा शुक्लेपक्षे बली शशी ॥

अर्थ--कृष्ण पक्ष में २, ५, ९ वें चन्द्र अशुभ हैं । कृष्ण पक्ष में तारा बलवती होती है और शुक्लपक्ष में चन्द्रमा बली होता है ।

राशिवश से पूर्वादि दिशाओं में चन्द्रवास--

मेषे च सिंहे धनुषीन्द्रभागे वृषे सुतायां मकरे च याम्ये ।
कुम्भे तुलायां मिथुने प्रतीच्यां कर्कालिमीनेषु तथोत्तरायाम् ॥

भा०-चौ०-मेष सिंह धनु पूरब चन्द्र, दक्षिण कन्या वृष मकरन्द ।
घट तुल मिथुन पश्चिमाधीन, उत्तर कर्कट वृश्चिक मीन ॥

चन्द्रमा का वर्ण और फल—

"अलौमेषसिंहेऽरुणोयुद्धकारीसितोगोवणिक्कर्कटर्क्षेषुसिद्धिः ।
धनुर्मीनयुग्मेषुपीतः शशी श्रीर्घटस्त्रीमृगाख्येषुकृष्णोभयं च ॥

अर्थ–मेष, सिंह, वृश्चिक के चन्द्रमा अरुण (लाल) वर्ण और युद्ध कारक होते हैं, वृष, कर्क तुला में श्वेत वर्ण और सिद्धि-दायक होते हैं, मिथुन, धन, मीन, में पीत वर्ण और लाभदायक होते हैं, तथा कन्या मकर कुम्भ में कृष्ण वर्ण और भयकारक होते हैं ।

सम्मुख आदि चन्द्र का फल—

सम्मुखेचार्थलाभः स्याद्दक्षिणे सुखसम्पदः ।

पृष्ठे च शोकसन्तापौ वामे चन्द्रे धनक्षतिः ॥

भाषा---सम्मुख चन्द्रमा में धनलाभ, दक्षिण (दहिने) भाग में सुख और सम्पत्ति, पृष्ठ दिशा के चन्द्रमा में शोक, सन्ताप, और वाम चन्द्र में धनक्षति होती है ।

अथ घात-चन्द्र-तिथि-वार-नक्षत्र—

"जन्मेन्दुनन्दार्कमघाश्च मेषे वृषे शनिः पञ्चमहस्तपूर्णाः ।
स्वाती च युग्मे नवचन्द्रभद्राःकर्केऽनुराधाबुधयुग्मभद्राः ॥
सिंहे जया षड्रविजश्च मूलं पूर्णाशनिर्दिक् श्रवणः स्त्रियां च ।
गुरुस्त्रिरिक्ताः शतभं तुलायां नन्दालिके रेवतिसप्तशुक्राः ॥
चापे चतुःशुक्रजयाभरण्यो मृगेऽष्टमो रोहिणिभौमरिक्ताः ।
कुम्भेजयार्द्रा गुरु शम्भु घातो झषे भृगुश्चान्त्यभुजङ्गपूर्णाः ॥

भाषा---प्रथम चन्द्र, नन्दातिथि, रविवार, मघानक्षत्र ये मेष राशि के घातक हैं । इसी प्रकार वृषराश्यादि के घात चन्द्र आदि समझना स्पष्टार्थ-नीचे चक्र देखो--

घात चन्द्रादि चक्र--

मे.	वृ.	मि.	कर्क	सिं	कं.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.	राशि
१	५	९	२	६	१०	३	७	४	८	११	१२	घातचन्द्र
र.	श.	चं.	बुध	श.	श.	बृ.	शु.	शु.	मं.	गु.	शु.	घातवार
म.	ह.	स्वा.	अनु.	मू.	श्र.	श.	रे.	भ.	रो.	आर्द्रा	श्ले.	घातनक्षत्र
१ ६ ११	५ १० १५	२ ७ १२	२ ७ १२	३ ६ १३	५ १० १५	४ ९ १४	१ ६ ११	३ ८ १३	४ ९ १४	३ ८ १३	५ १० १५	घात तिथि

अथ स्त्रीघात चक्र।

महीनागशैलाङ्कवेदाग्नितर्काः कराशाशिवाः पाण्डवाश्विन्रभानुः।
कुरङ्गीदृशां घातचन्द्रास्त्वजादेर्नृनार्योःसमंघाततिथ्यादिकंच ॥

अर्थ--मेष आदि राशिवाली स्त्रीके क्रम से १,८, ७, ९, ४, ३, ६, २, १०, ११, ५, १२, ये घात चन्द्र होते हैं तथा तिथि, वार नक्षत्र ये पुरुष और स्त्री को समान ही घातक होते हैं ॥

विशेष--

तीर्थयात्राविवाहान्नप्राशनोपनयादिषु।
सर्वमाङ्गल्यकार्येषु घातचन्द्रं न चिन्तयेत्।

अर्थ--तीर्थयात्रा, विवाह, अन्नप्राशन, उपनयन, आदि सर्व मंगलकार्यों में घातचन्द्र का दोष नहीं है।

युद्धे चैव विवादे च कुमारी पूजने तथा।
राजसेवाप्रयाणादौ घातचन्द्रं विवर्जयेत् ॥"

अर्थ-युद्ध में, विवाद में, कुमारी पूजन में, राजसेवा में तथा यात्रादि में घातचन्द्र वर्जित है।

अथ दुष्टचन्द्रादि शान्ति--

चन्द्रे शंखं च तारासु लवणं तण्डुलांस्तिथौ।
धान्यं दुष्टर्क्षवारे च दद्याल्लग्ने तिलांस्तथा ॥

अर्थ-दुष्टचन्द्र में शंख ❀ दुष्टतारा में लवण, × अशुभ तिथि

❀ टि०—"शंखाभावे महत्स्वच्छं तण्डुलं वा नवं दधि"
अर्थ-यदि शंख न हो सके तो स्वच्छ चावल, अथवा नवीन दही दान करे।

× दुष्ट तारा की शान्ति पृथक् पृथक् पहले कही गयी है, उन वस्तुओं के अभाव में लवण मात्र भी दान करना चाहिये।

में चावल, तथा अशुभ नक्षत्र और वार में धान्य, और अनिष्ट लग्नादि में तिल दान करके आवश्यक कार्य करै ।

अथ दिशा विचार—

यत्रोदेत्यस्ततां गच्छेदर्कस्ते पूर्वपश्चिमे ।
ध्रुवो यत्रोत्तरादिक् सा तद्विरुद्धा च दक्षिणा ॥

अर्थ–जिधर सूर्य का उदय होता है वह पूर्व दिशा है । जिधर अस्त होता है वह पश्चिम दिशा है तथा जिधर ध्रुवतारा है वह उत्तर दिशा है और उससे विरुद्ध भाग में दक्षिण दिशा है ।

स्पष्टदिक् साधन—

सायनार्काजसंक्रान्तौ काले सूर्योदये नरैः ।
भास्कराभिमुखैर्ज्ञेया दिशोऽथ विदिशः स्फुटाः ॥

अर्थ–सायन मेष के संक्रान्ति में सूर्योदय काल में सूर्याभिमुख होकर स्पष्ट दिशा और विदिशाओंका ज्ञान करे ।

यथा–(जैसे)

सम्मुखे पूर्वदिग् ज्ञेया पश्चाज्ज्ञेया च पश्चिमा ।
ऊत्तरा वामभागे या दक्षिणे सा च दक्षिणा ॥

अर्थ–संमुख जो दिशा हो वह पूर्वा, पीछे जो दिशा पड़े वह पश्चिमा, बायें भाग में जो दिशा पड़े वह उत्तर दिशा और दाहिने भाग की दक्षिण दिशा होती है ।

विदिशा विचार—

अग्निकोणस्तथाग्नेयी पूर्वदक्षिणमध्यगा ।
नैऋती निऋतेः कोणो दक्षिणापरमध्यगा ॥

पश्चिमोत्तरमध्यस्था वायवी वायुकोणकः।
ईशानकोण ऐशानी विदिक् पूर्वोत्तरान्तरे ॥

अर्थ-पूर्व दक्षिण के बीच में अग्निकोण (आग्नेयी) कहलाती है। तथा दक्षिण पश्चिम के मध्य में निऋति कोण (नैऋती), पश्चिम उत्तर के मध्य में वायुकोण (वायवी), और उत्तर पूर्व के बीच में ईशान कोण (ऐशानी) विदिक् कहलाती है।

इस प्रकार—पूर्व, दक्षिण, पश्चिम, उत्तर, आग्नेय, नैऋत्य, वायव्य, ऐशान्य, ऊर्ध्व (ऊपर); और अधः (नीचा) ये दश दिशायें हैं ॥

निर्णय—

आग्नेयी पूर्वदिग्ज्ञेया दक्षिणादिक् च नैऋती।
वायवी पश्चिमा दिक् स्यादैशानी च तथोत्तरा ॥

अर्थ-अग्निकोण की गणना पूर्वदिशा में, वायुकोण की उत्तर दिशा में, नैऋतकोण की दक्षिण दिशा में, ईशानकोण की उत्तर दिशा में गणना होती है।

अथ दिशाशूल-

नैव पूर्वदिशं गच्छेज्ज्येष्ठायां शनिसोमयोः।
तथैव दक्षिणामाशां नैवाजपदभे गुरौ ॥
पश्चिमाशां व्रजेन्नैव रोहिण्यां रविशुक्रयोः।
कुजे बुधेऽर्यमर्क्षे च नो व्रजेदुत्तरां दिशम् ॥

अर्थ-ज्येष्ठा नक्षत्र शनि और सोमवार में पूर्व दिशा न जाय, पूर्वभाद्रपदा और गुरुवार में दक्षिण दिशा न जाय, रोहिणी और

रवि शुक्रवारमें पश्चिम न जाय, उत्तराफाल्गुनी और मंगल बुध वार में उत्तर दिशा न जाय।

दिक्शूलपरिहार--

रविवारे घृतं भुक्त्वा सोमवारे पयस्तथा ।
गुडं मंगलवारे तु बुधवारे तिलानपि ॥
बृहस्पतौ दधि प्राश्य शुक्रवारे यवांस्तथा ।
माषान् भुक्त्वा शनौ गच्छेत् शूलदोषोपशान्तये ॥

अर्थ—रविवार में घृत, सोम में दूध, मंगल में गुड़, बुध में तिल, बृहस्पति में दहीं, शुक्र में जव, शनिवार में माष भोजन करके यात्रा करे तो शूल का दोष नहीं होता ॥

अथ योगिनीवास--

पूर्वस्यां योगिनी ज्ञेया नवम्यां प्रतिपद्यपि ।
अग्निकोणे तृतीयायामेकादश्यां तथैव च ॥
त्रयोदश्यां च पञ्चम्यां दक्षिणस्यां शिवा स्मृता ।
द्वादश्यां च चतुर्थ्यां च नैर्ऋत्यां चैव योगिनी ॥
चतुर्दश्यां च षष्ठ्यां च पश्चिमायां च योगिनी ।
सप्तम्यां पूर्णिमायां च वायव्यां पार्वती स्मृता ॥
दशम्यां च द्वितीयायामुत्तरस्यां शिवप्रिया ।
ऐशान्यां च तथाऽष्टम्यां दर्शे च योगिनी स्मृता ॥

अर्थ—प्रतिपदा और नवमी में पूर्व दिशा में, ३, ११ में अग्निकोण में, ५, १३ तिथि में दक्षिण में, १२, ४ में नैर्ऋत्यकोण में १४, ६, में पश्चिम में, पूर्णिमा, सप्तमी में वायुकोण में, १०, २ में

उत्तर में और अष्टमी अमावास्या में ईशान्यकोण में योगिनी रहती है।

अथ योगिनीफल--

"सुखदा योगिनी वामे पृष्ठे वाञ्छितदायिनी।
दक्षिणे धनहन्त्री च सम्मुखे मरणप्रदा॥

अर्थ-यात्रा में वाम भाग में योगिनी सुख देती है। पृष्ठभाग में वाञ्छित पदार्थ देती है। दहिने भाग में योगिनी पड़े तो धन को नाश करती है। सम्मुख भाग में पड़े तो मरण देती है।

अथ कालवास—

शनौ शुक्रे गुरौ ज्ञे च भौमे सोमे रवौ क्रमात्।
पूर्वादिषु दिशास्वत्र कालवासो निगद्यते॥

अर्थ—शनि में पूर्व दिशा में, शुक्र में अग्निकोण में, बृहस्पति में दक्षिण, बुध में नैऋत्य कोण, मंगल में पश्चिम, सोम में वायु-कोण और रविवार में उत्तर दिशा में काल रहता है।

अथ राहुनिवास—

धनुरलिमकरार्के राहुरास्ते च पूर्वे।
सघटसफरमेषे दक्षिणे दिग्विभागे॥
वृषमिथुनकुलीरे पश्चिमस्थश्च कालो।
हरियुवतितुलायामुत्तरे सैंहिकेयः॥

अर्थ—वृश्चिक धन मकर के सूर्य में पूर्व, कुम्भ मीन मेष के सूर्य में दक्षिण, वृष मिथुन कर्क के सूर्य में पश्चिम तथा सिंह कन्या तुला के सूर्य में उत्तर दिशा में राहु (काल) रहता है।

सम्मुखे दक्षिणे राहौ स्त्री यात्रां परिवर्जयेत् ।
गृहारम्भप्रवेशौ च सम्मुखे चैव वर्जयेत् ॥

अर्थ—सम्मुख दक्षिण राहु में स्त्री यात्रा न करे । और गृहारम्भ, गृहप्रवेश केवल सम्मुख राहु में त्याग करे ।

अथ यात्राप्रकरण—

यात्रा में शुभ नक्षत्र—

अश्विनी रेवती ज्येष्ठा पुष्यो हस्तः पुनर्वसुः ।
मैत्रं मृगशिरो मूलं यात्रायामुत्तमाः स्मृताः ॥

अर्थ—अश्विनी, रेवती, ज्येष्ठा, पुष्य, हस्त, पुनर्वसु, अनुराधा, मृगशिरा, मूल ये यात्रा में उत्तम हैं ।

यात्रा में अशुभ नक्षत्र—

भरणी कृत्तिकाऽश्लेषा विशाखा चोत्तरात्रयम् ।
मघाऽऽर्द्रा चाशुभा ज्ञेयास्तथा चान्याश्च मध्यमाः ॥

अर्थ—भरणी, कृत्तिका, श्लेषा, विशाखा, तीनो उत्तरा, मघा, आर्द्रा, ये यात्रा में अशुभ हैं । और शेष मध्यम हैं ।

अथ सर्वदिग्गमनार्ह नक्षत्र—

"कराश्विनीचान्द्रधनिष्ठमैत्रैः पौष्णामराचार्यचतुर्भुजैश्च ।
प्रयाति सर्वां ककुभं मनस्वी नरः कृतार्थो गृहमेति भूयः ॥

अर्थ—हस्त, अश्विनी, मृगशिरा, धनिष्ठा, अनुराधा, रेवती,

पुष्य, श्रवण इन सर्वदिग्द्वार नक्षत्रों में सब दिशाओं में जाने से मनुष्य कृतकार्य होकर सकुशल घर आता है।

यात्रा में विहित लग्न—

कन्यायां मिथुने लग्ने मकरे च तुलाधरे।
यात्रा चन्द्रबले कार्या शकुनञ्च विचारयेत् ॥

अर्थ—कन्या, मिथुन, मकर, तुला इन लग्नों में चन्द्रमा का बल देखकर यात्रा करे और शकुन विचार करे।

यात्रा में वर्ज्य—

जन्मतारेष्टमे चन्द्रे संक्रान्तौ सूर्यगे विधौ।
भद्रागण्डान्तरिक्तासु षष्ठ्यां नैव व्रजेत्कचित् ॥
द्वादश्यामपि चाष्टम्यां न गच्छेत्प्रस्थितोऽपि सन्।
जन्ममासे न गन्तव्यं राज्ञा विजयमिच्छता ॥

अर्थ—जन्मतारा, अष्टम चन्द्र, संक्रान्ति दिन (उपलक्षण से मासांत और मासादि दिन) अमावास्या, भद्रा, गण्डान्त, रिक्ता और षष्ठी में कदापि यात्रा न करे, तथा द्वादशी, अष्टमी, और जन्म मास में प्रस्थान करने पर भी विजय चाहने वाला यात्रा न करे।

लग्नशुद्धि—

केन्द्रत्रिकोणद्विगताश्च सौम्यास्तृतीयलाभारिगताश्च पापाः।
एवं यदि स्याद्गमने नरस्य तदार्थसिद्धिः पुनरागमश्च ॥

अर्थ—शुभग्रह केन्द्र (१।४।७।१०) त्रिकोण (५।९) और २ इन स्थानों में हों और पापग्रह ३।११।६, इन स्थानों में हों तो ऐसे लग्न में यात्रा करने से अर्थसिद्धि सहित भवन में सकुशल आता है।

अथ सर्वाङ्कज्ञान—

"तिथिं वारञ्च नक्षत्रमेकीकृत्य त्रिधा पुनः ।
द्वित्रिचतुर्भिर्गुणितं रससप्ताष्टभाजितम् ॥
आदिशून्ये भवेद्धानिर्मध्यशून्ये दरिद्रता ।
अन्त्यशून्ये भवेन्मृत्युः सर्वाङ्की विजयी भवेत् ॥

अर्थ–शुक्लपक्षकी प्रतिपदा से तिथिसङ्ख्या, रव्यादि–दिन सङ्ख्या और अश्विनी से नक्षत्र सङ्ख्या जो हो सबका योग करके ३ जगह धरे और क्रम से २, ३, ४ से गुणा करके ६, ७, ८ से भाग देने से प्रथम स्थान में शून्य हो तो हानि, मध्य में शून्य हो तो दरिद्रता, अन्त्य में शून्य बचे तो मृत्यु होती है और तीनों जगह अङ्क बचे तो विजयी होता है। यह युद्ध यात्रा में विचार करना चाहिये ॥

कुम्भकुम्भांशकौ त्याज्यौ सर्वथा यत्नतो बुधैः ।
तत्र प्रयातुर्नृपतेरर्थनाशः पदे पदे ॥

अर्थ—कुम्भलग्न और कुम्भ का नवांश यात्रा में अवश्य त्याग करे क्यों कि उसमें यात्रा करने से पद पद में अर्थनाश होता है ॥

त्र्यहं क्षीरं च पञ्चाहं क्षौरं सप्तदिनं रतम् ।
वर्ज्यं यात्रादिनात्पूर्वमशक्तस्तद्दिनेऽपि च ॥

अर्थ--यात्रा, दिन से तीन दिन पूर्व दूध, ५ दिन पूर्व क्षौर, सात दिन पूर्व मैथुन त्याग करे। ऐसा न हो सके तो यात्रा के दिन अवश्य त्याग करे।

सम्मुखे दक्षिणे शुक्रे युद्धयात्रां विवर्जयेत् ।
रेवत्यादेर्मृगं यावदन्धः शुक्रो न दोषकृत् ॥

अर्थ—सम्मुख और दक्षिण शुक्र में युद्धयात्रा न करे, परञ्च रेवती से मृगशिर पर्यन्त शुक्र अन्ध रहता है, उसमें सम्मुख शुक्र दोष कारक नहीं होता है ॥

यात्रा में प्रशस्त लग्न—

दिग्द्वारभेलग्नगते प्रशस्ता यात्रार्थदात्री जयकारिणी च ।
हानिं विनाशं रिपुतो भयं च कुर्यात्तथादिक्प्रतिलोमलग्ने ॥

अर्थ—दिग्द्वार राशि ("मेष सिंह धनु पूर्वे चन्द्र" इत्यादि) लग्न में यात्रा प्रशस्त है और धन जय को देने वाली होती है । पृष्ठ लग्न में (जैसे मेष लग्न में पश्चिम दिशा जाने में) हानि, धननाश और शत्रु से भय होता है ॥

समयफल—

उषःकालो विना पूर्वां गोधूलिः पश्चिमां विना ।
विनोत्तरं निशीथः स्याद्याने याम्यां विनाऽभिजित् ॥

अर्थ—उषःकाल में पूर्व दिशा में न जाय, तथा गोधूलि में पश्चिम न जाय, दोपहर रात्रि में उत्तर न जाय और अभिजित् में दक्षिण न जाय ।

सम्मुखस्थः शशी हन्ति दोषं तिथिभवारजम् ।
सर्वे दोषा विनश्यन्ति मनश्शुद्धिर्यदा नृणाम् ॥

अर्थ—यदि चन्द्रमा सम्मुख रहे तो तिथि, नक्षत्र, वार सम्बन्धी सब दोष नाश हो जाता है । और यदि मनःशुद्धि हो तो सब दोषों का नाश होता है ।

उपरोक्त विषय का विचार—

पुरात्पुरे यदैकस्मिन् दिने यात्राप्रवेशकौ ।

तदा तु योगिनीशूलप्रतिशुक्रान्न चिन्तयेत् ॥

अर्थ—यदि एकही दिन में अपने स्थान से यात्रा करके गन्तव्य स्थान में पहुँच सके तो दिक्शूल, योगिनी, संमुखशुक्र आदि का विचार नहीं करना चाहिये ॥

सर्वारम्भ लग्नशुद्धि—

सर्वकर्माणि कार्याणि शुभे लग्ने शुभांशके ।
त्रिलाभारिगतैः पापैः शुभैः केन्द्रत्रिकोणगैः ॥

अर्थ—शुभ राशि के लग्न में, शुभ राशि के नवांश में, पापग्रह ३, ६, ११ स्थान में, तथा शुभग्रह १।४।७।१०।५।९ स्थान में हों तो सब कार्य का आरम्भ करना शुभ है ।

अथ सर्वारम्भमुहूर्त—

"व्ययाष्टशुद्धोपचये लग्नगे शुभदृग्युते ।
चन्द्रे त्रिषड्दशायस्थे सर्वारम्भः प्रसिद्ध्यति ॥ १ ॥

अर्थ—जन्मराशि वा जन्मलग्न से उपचय (३।६।१०।११) राशि लग्न में हो और द्वादश तथा अष्टमस्थान शुद्ध (ग्रहवर्जित) हो और चन्द्रमा ३।६।१०।११ इन स्थान में हो तो सब वस्तु का आरम्भ शुभ होता है ॥ १ ॥

अथ विवाहप्रकरण—

वर कन्या की वर्षशुद्धि—

कन्याया दशमे वर्षे नवमेऽप्यष्टमेऽपि वा ।
वरस्य षोडशादूर्ध्वं विवाहो यौवने शुभः ॥ २ ॥

अर्थ--दशवें, नववें, आठवें वर्ष में कन्या का, और वर का १६ वर्ष के अनन्तर युवावस्था में (अर्थात् ४० वर्ष के भीतर) विवाह शुभ है ।

कन्या की संज्ञा--

'अष्टवर्षा भवेद्गौरी नववर्षा च रोहिणी ।
दशवर्षा च कन्या स्यादत ऊर्ध्वं रजस्वला ।। ३ ।।

अर्थ--आठवें वर्ष में गौरी, नवम वर्ष में रोहिणी, दशम वर्ष में कन्या कहलाती है, दश वर्ष के बाद रजस्वला कहलाती है ।।३।।

"गौरीं ददन्नागलोकं लभते स्वश्च रोहिणीम् ।
कन्यां ददन्मर्त्यलोकं रौरवं तु रजस्वलाम् ।। ४ ।।

अर्थ--गौरी दान करने से नागलोक, रोहिणी दान करने से स्वर्गलोक, कन्या दान करने से मर्त्यलोक और रजस्वला दान करने से रौरव (नरक) पाता है ।। ४ ।।

मतान्तर--

"गुरुशुद्धिवशेन कन्यकानां समवर्षेषु षडब्दकोपरिष्टात् ।
रविशुद्धिवशाच्छुभो वराणामुभयोश्चन्द्रविशुद्धितोविवाहः ।।

अर्थ--६ वर्ष के ऊपर सम (८ । १०) वर्ष में गुरुशुद्धि होने पर कन्या का और रविशुद्धि से वर का तथा कन्या और वर की चन्द्रशुद्धि से विवाह शुभ होता है ।। ५ ।।

रविशुद्धि--

जन्मराशेस्त्रिषष्ठायदशमेषु रविः शुभः ।
पश्चात् त्रयोदशांशेभ्यो द्विपञ्चनवमेष्वपि ।।

अर्थ--जन्मराशि से ३, ६, १०, ११ वें स्थान में रवि शुभ हैं। यदि १३ अंश से अधिक हो जाय तो २, ५, ९ वीं राशि में भी शुभ होते हैं ॥ ६ ॥

चन्द्र शुद्धि—

जन्मराशेस्त्रिषष्ठाद्य-सप्तमायखसंस्थितः ।
शुभश्चन्द्रो द्विकोणस्थः शुक्ले चाऽन्यत्र निन्दितः ॥७॥

अर्थ--जन्मराशि से ३, ६, १, ७, ११, १० वे स्थान में चन्द्रमा शुभ होते हैं २, ५, ९, वें में शुक्ल पक्ष में शुभ हैं ४, ८, १२ वें में अशुभ होते हैं ॥ ७ ॥

गुरुशुद्धि—

"वटुकन्याजन्मराशेस्त्रिकोणायद्विसप्तगः ।
श्रेष्ठो गुरुः खषट्त्र्याद्ये पूजयान्यत्र निन्दितः ॥८॥

अर्थ--बालक और कन्या की जन्म राशि से २, ५, ९, ७, ११ वें स्थान में गुरु शुभ होते हैं। तथा १०, ६, ३, १ इनमें शान्ति करने से शुभ होते हैं और ४, ८, १२ इनमें अशुभ हैं ॥ ८ ॥

विशेष—

स्वोच्चे स्वभे स्वमैत्रे वा स्वांशे वर्गोत्तमे गुरुः ।
अशुभोऽपि शुभो ज्ञेयो नीचारिस्थःशुभोऽप्यसन् ॥९॥

अर्थ—अपने उच्च में अपनी राशि में मित्र की राशि में अपने नवांश में गुरु रहे तो अशुभ भी शुभ होता है और नीच तथा शत्रु की राशि में रहे तो शुभ भी अशुभ होता है ॥ ९ ॥

अथ वरवरण (तिलक मुहूर्त)—

कन्याभ्राताऽथवा विप्रो वस्त्रालङ्करणादिना ।
ध्रुवपूर्वानलैः कुर्याद्वरवृत्तिं शुभे दिने ॥१०॥

अर्थ--कन्या के सोदरभाई अथवा कोई ब्राह्मण वस्त्र अलंकरण आदि से शुभ दिन में ध्रुव संज्ञक, तीनों पूर्वा और कृत्तिका नक्षत्र में वर को तिलक चढ़ावे ॥ १० ॥

अथ कन्यावरण मुहूर्त—

विवाहोक्तैश्च नक्षत्रैः शुभे लग्ने शुभे दिने ।
वस्त्रालंकरणाद्यैश्च कन्यकावरणं शुभम् ॥११॥

अर्थ--विवाहोक्त नक्षत्र, शुभ दिन, शुभ लग्न में वस्त्र अलंकार फल पुष्प आदि से कन्यावरण शुभ होता है ॥ ११ ॥

वर कन्या की कुण्डली विचार

लग्ने व्यये चतुर्थे च सप्तमे वाष्टमे कुजः ।
भर्तारं नाशयेद्भार्या भर्ता भार्यां विनाशयेत् ॥१२॥

अर्थ--यदि लग्न, द्वादश, चतुर्थ, सप्तम, अष्टम इन भावों में स्त्री की कुंडली में मंगल हो तो स्वामी का नाश होता है और पुरुष की कुण्डली में हो तो स्त्री का नाश करता है ॥ १२ ॥

परिहार—

सप्तमे च यदा सौरिर्लग्ने वापि चतुर्थके ।
नवमे द्वादशे चैव तदा भौमो न दोषकृत् ॥१३॥

अर्थ--यदि सप्तम, लग्न, चतुर्थ, नवम, द्वादश इन भावों में शनैश्चर हो तो भौम का दोष नहीं होता है ॥ १३ ॥

अथ मेलापक (आठ प्रकार के कूट)—

वर्णो वश्यं तथा तारा योनिश्च ग्रहमैत्रकम्।
गणकूटं भकूटं च नाडी चैते गुणाधिकाः ॥१४॥

यथा—१ वर्ण, २ वश्य, ३ तारा, ४ योनि, ५ ग्रहमैत्री, ६ गणकूट, ७ राशिकूट, ८ नाड़ी ये आठ प्रकार के कूट हैं। इनमें क्रम से एक एक गुण अधिक होते हैं॥ १४॥

यथा—वर्ण में १, वश्य में २, तारा में ३, योनि में ४, ग्रह-मैत्री में ५, गण मैत्री में ६, भकूट में ७, नाडी में ८ गुण होते हैं। सबका योग ३६ होता है॥

अथ वर्णज्ञान—

कर्कमीनालयो विप्राः सिंहो मेषो धनुर्नृपाः।
कन्यावृषमृगा वैश्याः शूद्रा युग्मतुलाघटाः ॥१५॥

अर्थ—कर्क, मीन, वृश्चिक ये ब्राह्मण वर्ण हैं। मेष, सिंह, धनु ये क्षत्रिय। कन्या, वृष, मकर ये वैश्य और मिथुन, तुला, कुम्भ ये शूद्र वर्ण हैं॥ १५॥

वर्णगुणसंख्या—

एको गुणः सदृग्वर्णे तथा वर्णोत्तमे वरे।
हीनवर्णे वरे शून्यं केप्याहुः सदृशे दलम्॥ १६॥

अर्थ—वर और कन्या एक वर्ण हो अथवा कन्या से वर का वर्ण उत्तम हो तो एक गुण, हीन वर्ण वर हो तो शून्य गुण होता है। कोई समान वर्ण में आधा गुण कहते हैं॥ १६॥

वर्णगुणचक्र—

वर्णज्ञानचक्र—

राशि	मीन कर्क वृ.	मे सिं. ध.	वृ. क. म.	मि. तु. कुं.
वर्ण	ब्रा.	क्ष.	वै.	शू.

वरवर्ण—

कन्या वर्ण	ब्रा.	क्ष.	वै.	शू.
ब्रा.	१	०	०	०
क्ष.	१	१	०	०
वै.	१	१	१	०
शू.	१	१	१	१

अथ वश्यज्ञान--

"हित्वा मृगेन्द्रं नरराशिवश्याः सर्वे तथैषां जलजाश्च भक्ष्याः ।
सर्वेऽपि सिंहस्य वशे विनालिं ज्ञेयं नराणां व्यवहारतोऽन्यत् ॥

अर्थ--सिंहराशिको छोड़ कर सब राशी नरराशि के वश्य होती हैं और जलचर राशि भक्ष्य हैं। और वृश्चिक को छोड़कर सब राशि सिंह के वश में हैं और राशियों के वश्यावश्य को व्यवहार से समझना ॥ १७ ॥

वश्यज्ञानार्थ-द्विपदादिसंज्ञा--

वृषसिंहधनुर्मेषा मकरार्धं चतुष्पदाः ।
मृगोत्तरार्धं कुम्भश्च मीनश्चैते जलेचराः ॥ १८ ॥
नरा मिथुनकन्ये च धनुः पूर्वार्धकं तुला ।
कीटस्तु कर्कटः प्रोक्तो वृश्चिकश्च सरीसृपः ॥ १९ ॥

अर्थ--मेष, वृष, सिंह, धनके उत्तरार्ध और मकर के पूर्वार्ध ये चतुष्पद हैं। मकर के उत्तरार्ध, कुम्भ, मीन ये जलचर हैं।

मिथुन, तुला, कन्या, धन के पूर्वार्ध ये द्विपद हैं। कर्क, कीट और वृश्चिक सरीसृप हैं ॥ १८–१९ ॥

वश्यगुणबोधक चक्र—

वरराशि—

कन्याराशि—

	च. प.	द्वि. प.	ज. च.	वनच.	कीट
चतुष्पद	२	१	१	॥	०
द्विपद	१	२	१	०	०
जलचर	१	॥	२	१	२
वनचर	०	०	२	२	०
कीट	१	०	१	०	२

वश्य गुणविभाग—

"सख्यं वैरं च भक्ष्यं च वश्यमाहुस्त्रिधा बुधः ।
वैरभक्ष्ये गुणाभावो द्वयोः सख्ये गुणद्वयम् ॥२०॥
वश्यवैरे गुणस्त्वेको वश्यभक्ष्ये गुणार्धकम् ।

अर्थ—सख्य (मैत्री), वैर, भक्ष्य, ये तीन प्रकार के वश्य कूट होते हैं। यदि वर कन्या की राशि में परस्पर वैर भक्ष्य हो तो शून्य गुण और दोनों में मैत्री हो तो २ गुण, वश्य वैर हो तो १ गुण, वश्य भक्ष्य हो तो आधा (॥) गुण होता है ॥ २० ॥

अथ ताराकूट—

"कन्यर्क्षाद्वरभं यावत् कन्याभं वरभादपि ॥२१॥
गणयेन्नवहृच्छेषे त्रीष्वद्रिभमसत्स्मृतम् ।

अर्थ—कन्या के नक्षत्र से वर के नक्षत्र तक और वर के नक्षत्र

से कन्या के नक्षत्र तक गिनकर पृथक् ९ का भाग देने से ७,५, ३ बचे तो अशुभ अर्थात् १,२,४,६,८, ९ बचे तो शुभ है॥

तारा गुणविभाग—

एकतश्चेच्छुभा तारा परतश्चाशुभा तदा ।
सार्द्धश्चैको गुणो ग्राह्यस्ताराशुद्ध्या मिथस्त्रयः ॥२२॥
उभयोर्न शुभा तारा तदा शून्यं समादिशेत् ।

अर्थ—एक से शुभ तारा दूसरे से अशुभ हो तो डेढ़ (१॥) गुण, दोनों से यदि शुभ तारा हो तो ३ गुण । यदि दोनों से अशुभ तारा हो तो ० गुण समझना ॥ २२ ॥

तारागुणबोधक चक्र— वरतारा संख्या—

सं. (कन्या की तारा संख्या)	१	२	३	४	५	६	७	८	९
१	३	३	१॥.	३	१॥.	३	१॥.	३	३
२	३	३	१॥.	३	१॥.	३	१॥.	३	३
३	१॥.	१॥.	०	१॥.	०	१॥.	०	१॥.	१॥.
४	३	३	१॥.	३	१॥.	३	१॥.	३	३
५	१॥.	१॥.	०	१॥.	०	१॥.	०	१॥.	१॥.
६	३	३	१॥.	३	१॥.	३	१॥.	३	३
७	१॥.	१॥	०	१॥.	०	१॥.	०	१॥.	१॥.
८	३	३.	१॥.	३	१॥.	३	१॥.	३	३
९	३	३	१॥.	३	१॥.	३	१॥.	३	३

अथ योनिकूट—

'अश्विन्यम्बुपयोर्हयो निगदितः स्वात्यर्कयो कासरः ।
'सिंहो वस्वजपाद्भयोः समुदितो याम्यान्त्ययोः कुञ्जरः ॥
मेषो देवपुरोहितानलभयोः कर्णाम्बुनोर्वानरः ।
स्याद्वैश्वाभिजितोस्तथैवनकुलश्चान्द्राब्जयोन्योरहिः ॥ २३ ॥
ज्येष्ठामैत्रभयोः कुरङ्ग उदितो मूलार्द्रयोः श्वा तथा ।
मार्जारोदितिसार्पयोरथ मघायोन्योस्तथैवोन्दुरुः ॥
व्याघ्रो द्वीशभचित्रयोरपि च गौरर्यम्णबुध्न्यर्क्षयो—
र्योनिः पादगयोः परस्परमहावैरं भयोन्योस्त्यजेत् ॥ २४॥

अर्थ—अश्विनी, शतभिषा की अश्व योनि, स्वाती हस्त की महिष, धनिष्ठा पूर्वभाद्रपदा की सिंह, भरणी रेवती की हस्ती, पुष्य कृत्तिका की मेष, श्रवण पूर्वाषाढा की वानर, उत्तराषाढा अभिजित की नकुल, मृगशिरा पूर्वाफाल्गुनी की सर्प, ज्येष्ठा अनुराधा की हरिण, मूल आर्द्रा की कुत्ता, पुनर्वसु, ऽश्लेषा की मार्जार, मघा, पूर्वाफाल्गुनी की मूषक, विशाखा चित्रा की व्याघ्र, उत्तराफाल्गुनी उत्तराभाद्रपदा की गौ योनि है । श्लोक के २ चरण में जो दो दो योनि पठित हैं उनमें परस्पर महावैर है । इसलियेत्याज्य है ॥

अथ योनिगुण विभाग—

महावैरे च वैरे च समे चैव यथाक्रमम् ।
मैत्रे चैवातिमैत्रे च खैकद्वित्रिचतुर्गुणाः ॥ २५ ॥

अर्थ—परस्पर महावैर में ० शून्य, वैर में १, सम में २, मैत्री में ३, अति मैत्री में ४ ग्रहण करना चाहिये ॥ २५ ॥

योनिगुणबोधक चक्र--

	अ.	ग.	मे.	स.	श्वा.	मा.	मू.	गौ	म.	व्या	मृ.	वा	न.	सिं
अश्व	४	२	३	२	२	२	२	३	०	१	३	२	२	१
गज	२	४	३	२	२	२	२	२	३	२	२	३	२	०
मेष	३	३	४	३	२	३	२	३	३	१	३	०	३	१
सर्प	२	२	३	४	२	२	१	१	२	२	२	२	०	२
श्वान	२	२	२	२	४	१	१	२	२	१	०	२	२	१
मार्जार	२	२	३	२	१	४	०	२	२	१	२	२	२	२
मूषक	२	२	२	१	१	०	४	२	२	२	२	२	२	१
गौ	३	२	३	१	२	२	२	४	३	०	३	२	३	१
महिष	०	३	३	२	२	२	२	३	४	१	२	२	२	३
व्याघ्र	१	२	१	२	१	१	२	०	१	४	१	१	२	२
मृग	३	२	३	२	०	२	२	३	२	१	४	२	२	२
वानर	२	३	०	२	२	२	२	२	२	१	२	४	२	३
नकुल	२	२	३	०	२	२	२	३	२	२	२	२	४	३
सिंह	१	०	१	२	१	२	१	१	२	२	२	३	२	४

अथ ग्रहमैत्री—

"रवेः समो ज्ञो मित्राणि चन्द्रारेज्याः परावरी ।
इन्दोर्न शत्रवो मित्रे रविज्ञावितरे समाः ॥२६॥
समा कुजस्य शुक्रार्की बुधोऽरिः सुहृदः परे ।
ज्ञस्य चन्द्रो रिपुर्मित्रे शुक्रार्कावितरे समाः ॥२७॥
आरार्कज्ञा गुरोर्मित्राण्यार्किर्मध्यः परावरी ।
भृगोः समावीज्यकुजौ मित्रे ज्ञार्की परौ रिपू ॥२८॥

शनेर्गुरुः समो मित्रे शुक्रज्ञौ शत्रवः परे ।
कश्यपोक्त्याऽनया विज्ञो ग्रहमैत्रीं विचारयेत् ॥२९॥

अर्थ--रवि के बुध सम, चन्द्रमा मंगल बृहस्पति मित्र, शुक्र, शनि शत्रु हैं । चन्द्रमा के शत्रु नहीं हैं, रवि बुध मित्र, मंगल बृहस्पति शुक्र शनि सम हैं। मंगल के शुक्र शनि सम, बुध शत्रु, चन्द्र रवि बृहस्पति मित्र हैं। बुध के चन्द्रमा शत्रु, सूर्य शुक्र मित्र, मंगल बृहस्पति शनि सम हैं। बृहस्पति के रवि मंगल बुध मित्र, शनि सम, चन्द्र शुक्र शत्रु हैं। शुक्र के मंगल बृहस्पति सम, बुध शनि मित्र, रवि चन्द्र शत्रु हैं । शनि के गुरु सम, बुध शुक्र मित्र, रवि चन्द्र मंगल शत्रु हैं। इस काश्यप मुनि की उक्ति से ग्रहमैत्री विचार करना चाहिये ॥ २६--२९ ॥

ग्रहमैत्री गुणविभाग—

"ग्रहमैत्रं सप्तविधं गुणाः पञ्च प्रकीर्तिताः ।
तत्रैकाधिपतित्वे च मित्रत्वे गुणपञ्चकम् ॥३०॥
चत्वारः सममित्रत्वे द्वयोः साम्ये त्रयो गुणाः ।
मित्रवैरे गुणश्चैकः समवैरे गुणार्द्धकम् ॥३१॥
परस्परं खेटवैरे गुणशून्यं विनिर्दिशेत् ।
असद्भे सममित्रादौ व्येका ग्राह्या यथोदिताः ॥३२॥

अर्थ--ग्रहमैत्री कूट सात प्रकार के हैं और ५ गुण हैं। इनमें यदि वर कन्या की राशीश में एकाधिपत्य वा मैत्री हो तो ५ गुण, सम मित्रता हो तो ४ गुण, दोनों में समता हो तो ३ गुण, मित्र शत्रुत्व हो तो १ गुण, सम शत्रुता हो तो अर्ध (।.) गुण,

परस्पर शत्रुता हो तो शून्य गुण होता है। मित्रादि होने पर भी यदि नीच आदि में हो तो उचित गुण में एक अल्प करके ग्रहण करना चाहिये ॥ ३०–३२ ॥

अथ ग्रहमैत्री गुण बोधक चक्र—

	सू०	चं०	मं०	बु०	बृ०	शु०	श०
सू०	५	५	५	४	५	०	०
चं०	५	५	४	१	४	॥	॥
मं०	५	४	५	॥	५	३	॥
बु०	४	१	॥	५	॥	५	४
बृ०	५	४	५	॥	५	॥	३
शु०	०	॥	३	५	॥	५	५
श०	०	॥	॥	४	३	५	०

अथ गणकूट—

"रक्षोनरामरगणाः क्रमतो मघाहिवस्विन्द्रमूलवरुणानलतक्षराधाः। पूर्वोत्तरात्रयविधातृयमेशभानि मैत्रादितीन्दुहरिपौष्णमरुल्लघूनि ॥ ३३ ॥

अर्थ–मघा, श्लेषा, धनिष्ठा, ज्येष्ठा, मूल, शततारका, कृत्तिका, चित्रा, विशाखा ये राक्षसगण हैं,। तीनों पूर्वा, तीनों उत्तरा, रोहिणी, भरणी, आर्द्रा, ये नरगण हैं। अनुराधा, पुनर्वसू, मृगशिरा, श्रवण, रेवती, स्वाती और लघुसंज्ञक (हस्त, पुष्य, अश्विनी, अभिजित) ये देवगण हैं ॥ ३३ ॥

अथ फल—

स्वगणे परमाप्रीतिर्मध्यमा नरदेवयोः ।
नरराक्षसयोर्मृत्युः कलहो देवरक्षसोः ॥३४॥

अर्थ—अपने गण में उत्तम प्रीति, देव मनुष्य गण में मध्य प्रीति होती है, नर राक्षसगण में मृत्यु, और देव राक्षस गण में कलह होता है ॥ ३४ ॥

अथ गणकूट गुणविभाग—

स्वगणे षड्गुणाः प्रोक्ताः पञ्च देवमनुष्ययोः ।
देवराक्षसयोश्चैकः शून्यं मनुजरक्षसोः ॥३५॥

अर्थ—स्वगण में ६ गुण, देव नर में ५, देव राक्षस में १, नर राक्षस में शून्य ० गुण होता है ॥ ३५ ॥

गण गुणबोधक चक्र—

वर

कन्या	देव	नर	राक्षस
देव	६	५	१
नर	५	६	०
राक्षस	१	०	६

वर—

गणादि दोष परिहार—

राशीशयोः सुहृद्भावे मित्रत्वे वांशनाथयोः ।
गणादिदौष्ट्येऽप्युद्वाहः पुत्रपौत्रप्रवर्धनः ॥३६॥

अर्थ—राशीश में मैत्री हो अथवा अंश के स्वामी में मैत्री हो तो गणादि दुष्ट रहने पर भी विवाह पुत्र पौत्र को बढ़ानेवाला होता है ॥ ३६ ॥

अथ राशिकूट—

"मृत्युः षट्काष्टके ज्ञेयोऽपत्यहानिर्नवात्मजे ।
द्विर्द्वादशे दरिद्रत्वं द्वयोरन्यत्र सौख्यकृत् ॥३७॥

अर्थ—वर की राशि से कन्या की राशि तक और कन्या की राशि से वर की राशि तक गिनने से ६।८ हो तो दोनों की मृत्यु, ९।५ हो तो सन्तान हानि, २।१२ हो तो दरिद्रता होती है ॥३७॥

दुष्टभकूटपरिहार—

एकाधिपत्ये राशीशमैत्र्यां दुष्टभकूटके ।
नाडीनक्षत्रशुद्धिश्चेद्विवाहः शुभदस्तदा ॥३८॥

अर्थ—वर और कन्या दोनों की राशि के स्वामी एक ही ग्रह हो अथवा दोनों राशीश में मैत्री हो और नाड़ी नक्षत्र शुद्ध रहे तो दुष्टभकूट में भी विवाह शुभ होता है ॥ ३८ ॥

राशिकूट गुणबोधक चक्र—

वर की राशि

कन्या की राशि ।	मे·	वृ·	मि·	क·	सिं·	कं.	तु·	वृ·	ध·	म·	कुं·	मी·
मे·	७	०	७	७	०	०	७	०	०	७	७	०
वृ·	०	७	०	७	७	०	०	७	०	०	७	७
मि·	७	०	७	०	७	७	०	०	७	०	०	७
क·	७	७	०	७	०	७	७	०	०	७	०	०
सिं·	०	७	७	०	७	०	७	७	०	०	७	०
कं.	०	०	७	७	०	७	०	७	७	०	०	७
तु·	७	०	०	७	७	०	७	०	७	७	०	०
वृ·	०	७	०	०	७	७	०	७	०	७	७	०
ध·	०	०	७	०	०	७	७	०	७	०	७	७
म·	७	०	०	७	०	०	७	७	०	७	०	७
कुं·	७	७	०	०	७	०	०	७	७	०	७	०
मी·	०	७	७	०	०	७	०	०	७	७	०	७

अथ नाड़ीकूट—

ज्येष्ठारौद्रार्यमाम्भःपतिभयुगयुगं दास्रभं चैकनाडी ।

पुष्येन्दुत्वाष्ट्रमित्रान्तकवसुजलभं योनिबुध्न्ये च मध्या ॥
वाय्वग्निव्यालविश्वोडुयुगयुगमथो पौष्णभं चापरा स्या- ।
द्दम्पत्योरेकनाड्यां परिणयनमसन्मध्यनाड्यां च मृत्युः ॥३९॥

अर्थ--ज्येष्ठा, आर्द्रा, मूल, पुनर्वसू, उत्तराफाल्गुनी, हस्त, शतभिषा, पूर्वभाद्र, अश्विनी ये आदि नाड़ी और पुष्य, मृगशिरा, चित्रा, अनुराधा, भरणी, धनिष्ठा, पूर्वाषाढ, पूर्वफाल्गुनी, उत्तरभाद्र ये मध्यनाड़ी तथा स्वाती, विशाखा, कृत्तिका, रोहिणी, आश्लेषा, मघा, उत्तराषाढा, श्रवण, रेवती ये अन्त्यनाड़ी हैं । वर कन्या की एक नाड़ी में विवाह अशुभ है, मध्यनाड़ी में मृत्यु होती है ॥ ३९ ॥

नाडीबोधक चक्र—

आदि	अ	आ	पु	उ.फा.	ह	ज्ये	मू	श	पू
मध्य	भ	मृ	पु	पू.फा.	चि.	अ	पू	ध	उ
अन्त्य	कृ	रो	श्ले	म	स्वा	वि	उ.	श्र	रे

नाडी गुणबोधक चक्र—

वरनाड़ी

कन्या नाड़ी—

	आदि	मध्य	अन्त्य
आदि	०	८	८
मध्य	८	०	८
अन्त्य	८	८	०

विशेष—

नाडीदोषोऽस्ति विप्राणां वर्णदोषोऽस्ति भूभुजाम् ।
वैश्यानां गणदोषः स्यात् शूद्राणां योनिदूषणम् ॥४०॥

अर्थ—ब्राह्मणों को नाड़ीदोष, क्षत्रियों को वर्णदोष, वैश्यों को गणदोष, और शूद्रों को योनिदोष विशेष करके है ॥ ४० ॥

परिहार—

राश्यैक्येचेद्भिन्नमृक्षं द्वयोः स्यान्नक्षत्रैक्ये राशियुग्मं तथैव ।
नाडीदोषो नोगणानां न दोषो नक्षत्रैक्ये पादभेदे शुभंस्यात्॥

अर्थ—वर कन्या की एक राशि हो और नक्षत्र भिन्न-भिन्न हो अथवा एक नक्षत्र हो और भिन्न २ राशि हो तो नाड़ीदोष और गणदोष नहीं होता है । तथा एक नक्षत्र में चरण के भेद होने से शुभ होता है॥

ग्राह्य अग्राह्य गुण संख्या—

अशुभोऽष्टादशाल्पश्चेत् शुभोऽष्टादशतोधिकः ।
शुभोऽतिशुणयोगश्चेत्सप्तविंशतितोऽधिकः ॥ ४२ ॥

अर्थ—आठों कूट के गुण का योग १८ से अल्प अशुभ, और १८ से अधिक शुभ है तथा २७ से अधिक हो तो अत्यन्त शुभ है।

अथ वर्गकूट—

अवर्गो गरुडस्योक्तो मार्जारस्य कवर्गकः ।
सिंहस्यैव चवर्गस्तु कुक्कुरस्य टवर्गकः ॥
सर्पस्योक्तस्तवर्गस्तु पवर्गो मूषकस्य च ।
यवर्गस्तु गजस्योक्तो मेषस्य तु शवर्गकः ॥ ४४ ॥

अर्थ—अवर्ग के स्वामी गरुड़, कवर्ग के मार्जार, चवर्ग के

सिंह, टवर्ग के कुक्कुर, तवर्ग के सर्प, पवर्ग के मूषक, यवर्ग के हरिण (मृग) शवर्ग के स्वामी मेष हैं ॥ ४३ ॥ ४४ ॥

स्ववर्गात्पञ्चमः शत्रुश्चतुर्थो मित्रसंज्ञकः ।
उदासीनस्तृतीयः स्याद्वर्गभेदस्त्रिधोदितः ॥ ४५ ॥
स्ववर्गे परमाप्रीतिर्मित्रवर्गेऽपि तादृशी ।
उदासीने प्रीतिरल्पा शत्रुवर्गे मृतिर्भवेत् ॥ ४६ ॥

अर्थ--अपने से ५ वां वर्गेश शत्रु, ४ थं मित्र, ३ तृतीय उदासीन (सम) होते हैं । इस प्रकार तीन भेद हैं । एक वर्ग में अत्यन्त प्रीति, मित्र वर्ग में उत्तम प्रीति, और उदासीन में थोड़ी प्रीति होती है । परस्पर शत्रुवर्ग में मृत्यु होती है ॥ ४५-४६ ॥

वर्ग चक्र—

	वर्ग	स्वामी	मित्र	सम	शत्रु	दिशा	स्वर
अवर्ग	अ इ उ ए ओ	गरुड़	श्वान	सिंह	सर्प	पूर्व	८
कवर्ग	क ख ग घ ङ	मार्जार	सर्प	श्वान	मूषक	अग्निको.	५
चवर्ग	च छ ज झ ञ	सिंह	मूषक	सर्प	मृग	दक्षिण	६
टवर्ग	ट ठ ड ढ ण	श्वान	मृग	मूषक	मेष	नैऋत्य	४
तवर्ग	त थ द ध न	सर्प	मेष	मृग	गरुड़	पश्चिम	७
पवर्ग	प फ ब भ म	मूषक	गरुड़	मेष	मार्जार	वायव्य	१
यवर्ग	य र ल व	मृग	मार्जार	गरुड़	सिंह	उत्तर	३
शवर्ग	श ष स ह	मेष	सिंह	मार्जार	श्वान	ईशान	२

अथ विवाहमुहूर्त--(नाह्लिदत्त)

"रेवत्युत्तररोहिणीमृगमघामूलानुराधाकरः--
स्वातीषु प्रमदातुलामिथुनके लग्ने विवाहः शुभः ।
मासाः फाल्गुनमाघमार्गशुचयो ज्येष्ठस्तथा माधवः
शस्ताःसौम्यदिनं तथैव तिथयो रिक्ताकुहूवर्जिताः ॥४७॥

अर्थ—रेवती तीनों उत्तरा रोहिणी मृगशिरा मघा मूल अनुराधा हस्त स्वाती इन नक्षत्रों में, कन्या तुला मिथुन लग्न में, फाल्गुन माघ मार्ग (अग्रहण) आषाढ़ ज्येष्ठ इन मासो में (शनि मंगल छोड़ कर) और शुभ दिन में तथा रिक्ता तिथि और अमावास्या को छोड़कर और तिथियों में विवाह शुभ है ॥४॥

विशेष—

मिथुनकुम्भमृगालिवृषाजगेमिथुनगेऽपिरवौ त्रिलवेशुचेः ।
अलिमृगाजगतेकरपीडनं भवति कार्तिकपौषमधुष्वपि॥४८॥

अर्थ—मिथुन के सूर्य (आषाढ़) में, कुम्भ के सूर्य (फाल्गुन) में, मकर के सूर्य (माघ) में, वृश्चिक के सूर्य (अग्रहण) में, वृष के सूर्य (ज्येष्ठ) में, मेष के सूर्य (वैशाख) में, विवाह शुभ है । विशेष यह है कि मिथुन के सूर्य रहने पर भी आषाढ़ के त्रिलव (अर्थात् केवल आषाढ़ शुक्ल १ से १० दशमी पर्यन्त) विवाह शुभ है, हरिशयन में विवाह वर्जित है । तथा वृश्चिक, मकर, मेष वा कुम्भ के सूर्य रहें तो कार्तिक, पौष, और चैत्र में भी विवाह शुभ है ॥ ४८ ॥

विवाह में विहित—

केन्द्रे कोणे द्वितीये च तृतीये च शुभग्रहाः ।

पापास्त्रिषष्ठलाभेषु स्थिताः श्रेष्ठफलप्रदाः ॥ ४९ ॥

अर्थ—विवाह लग्न से १ । २ । ३ । ४ । ५ । ७ । ९ । १० इन स्थानों में शुभग्रह, तथा (३ । ६ । ११) इन स्थानों में पापग्रह शुभफलदायक होते हैं ॥ ४९ ॥

विवाह में वर्जित—

जन्ममासर्क्षवारेषु पित्रोः श्राद्धतिथौ तथा ।
ज्येष्ठापत्यस्य च ज्येष्ठे विवाहं परिवर्जयेत् ॥ ५० ॥

अर्थ—जन्ममास, जन्मनक्षत्र, जन्मदिन में तथा माता, पिताके मरण दिन में तथा ज्येष्ठ मास में ज्येष्ठ सन्तान का विवाह शुभ नहीं है ॥

ज्येष्ठमासो वरोज्येष्ठस्तथा ज्येष्ठा च कन्यका ।
त्रिज्येष्ठं न शुभं प्रोक्तं मध्यं ज्येष्ठद्वयं स्मृतम् ॥५१॥

अर्थ—ज्येष्ठ मास, ज्येष्ठ वर, ज्येष्ठ कन्या, ये तीन ज्येष्ठ विवाह में शुभ नहीं हैं । दो ज्येष्ठ मध्यम हैं, अर्थात् एक ज्येष्ठ शुभ है ॥५१॥

विवाह लग्न में त्याज्य--

लग्ने व्यये शनिस्त्याज्यः षष्ठे शुक्रेन्दुलग्नपाः ।
रन्ध्रे शन्यादयः पञ्च सर्वेऽस्ते च गुरुं विना ॥५२॥

अर्थ—लग्न और द्वादश में शनि, षष्ठ में शुक्र चन्द्र लग्नेश, अष्टम में शनि, रवि, चन्द्र, भौम, बुध, और सप्तम में बृहस्पति को छोड़कर सब ग्रह त्याज्य हैं ॥ ५२ ॥

यामार्धं च व्यतीपातं भद्रां वैधृतिकं तथा ।
वर्जयेत् सर्वकार्येषु रविदग्धं दिनत्रयम् ॥ ५३ ॥

अर्थ-अधपहरा, व्यतीपात योग, भद्रा करण, वैधृति योग, और सूर्य के संक्रान्ति से दूषित ३ दिन (अर्थात् मासान्त, संक्रान्ति, मासादि) सब कार्य में त्याग करना चाहिये ॥ ५३ ॥

क्षीणेऽस्ते च गुरौ शुक्रे तथा न्यूनाधिमासके ।
गण्डान्ते च विवाहादि शुभं कर्म विवर्जयेत् ॥५४॥

अर्थ--गुरु शुक्र क्षीण हो अथवा अस्त हो तथा क्षयमास और मलमास में तथा गण्डान्त में विवाह उपनयन मुण्डन आदि शुभ कार्य न करे ॥ ५४ ॥

अथ गण्डान्तलक्षण—

ज्येष्ठापौष्णभसार्पभान्त्यघटिकायुग्मं च मूलाश्विनी
पित्र्यादौ घटिकाद्वयं निगदितं तद्भस्य गण्डान्तकम् ।
कर्काल्यण्डजभान्ततोऽर्धघटिका सिंहाश्वमेषादिगा
पूर्णान्ते घटिकात्मकं त्वशुभदं नन्दातिथेश्चादिमम् ॥५५॥

अर्थ--ज्येष्ठा रेवती ऽश्लेषा इन नक्षत्रों के अन्त्य की दो २ घड़ी, और मूल, अश्विनी, मघा इनके आदि की दो २ घड़ी नक्षत्र गण्डान्त है, और कर्क वृश्चिक मीन इनके अन्त्य की आधी घड़ी सिंह, धनु मेष के आदि की आधी घड़ी राशि गण्डान्त है । तथा पूर्णातिथि के अन्त्य की १ घड़ी, नन्दा तिथि के आदि की १ घड़ी तिथि गण्डान्त होता है ॥ ५५ ॥

विशेष—

मिथिलेतरदेशेषु क्वचिद्रिक्ता शनौ यदि ।
तदा पाणिग्रहःशस्तो मन्यते गणकोत्तमैः ॥ ५६ ॥

अर्थ--मिथिला से भिन्न देश में शनिवार में रिक्ता तिथि हो तो कितने स्थानों में विवाह शुभ मानते हैं ॥ ५६ ॥

इति विवाहप्रकरण ॥

अथ वधूप्रवेशप्रकरण ।

वधूप्रवेशमुहूर्त—

समाद्रिपञ्चाङ्कदिने विवाहाद्वधूप्रवेशोऽष्टिदिनान्तराले ।
शुभःपरस्ताद्विषमाब्दमासदिनेऽक्षवर्षात्परतोयथेष्टम् ॥१॥

अर्थ--विवाह दिन से १६ दिन के भीतर पञ्चम सप्तम नवम तथा सम (६।८।१०।१२।१४।१६ वें) दिन में वधूप्रवेश शुभ है, १६ दिन के बाद विषममास, विषमवर्ष, विषम (१।३ इत्यादि) दिन में शुभ है + और ५ वर्ष के बाद जब इच्छा हो शुभ मुहूर्त में वधूप्रवेश शुभ है ॥ १ ॥

नक्षत्रादिशुद्धि—

ध्रुवक्षिप्रमृदुश्रोत्रवसुमूलमघानिले ।
वधूप्रवेशः सन् नेष्टो रिक्तारार्के बुधे परैः ॥ २॥

---

* नूतनविवाहिता कन्या के प्रथम स्वामी के गृह में प्रवेश करना वधूप्रवेश कहलाता है ॥

+ १६ दिन के बाद १ मास के भीतर विषम दिन में, १ मास के बाद एक वर्ष के भीतर विषम मास में तथा १ वर्ष के बाद विषम वर्ष में वधूप्रवेश शुभ है ।

अर्थ--ध्रुवसंज्ञक, क्षिप्रसंज्ञक, मृदुसंज्ञक, श्रवण, धनिष्ठा, मूल, मघा, स्वाती इन नक्षत्रों में वधूप्रवेश शुभ है। और रिक्ता तिथि रविवार मंगलवार में अशुभ है। कितने आचार्य के मत से बुध में भी वधूप्रवेश अशुभ है ॥ २ ॥

इति वधूप्रवेश प्रकरण।

अथ द्विरागमन प्रकरण।

पूषापुष्यपुनर्वसूत्तरमृगा मैत्राश्वहस्तत्रयी
रोहिण्यः श्रवणा द्विरागमविधौ मूलं धनिष्ठा तथा।
कुम्भाजालिरविश्च वर्षमसमं त्यक्त्वा कुजार्कौ च-गो
कन्यामन्मथमीनतौलिमकरा लग्नानि यात्रातिथिः ॥

अर्थ--रेवती, पुष्य, पुनर्वसू, तीनों उत्तरा, मृगशिरा, अनुराधा, अश्विनी, हस्त, चित्रा, स्वाती, रोहिणी, श्रवण, मूल, धनिष्ठा ये नक्षत्र, कुम्भ, मेष, वृश्चिक में सूर्य हो तथा विवाह से विषम (१।३ इत्यादि) वर्ष, शनि, मंगल छोड़ कर और वार, वृष कन्या मिथुन तुला मकर ये लग्न और यात्रोक्त तिथि ये द्विरागमन में शुभ हैं ॥

द्विरागमन में त्याज्य—

अस्तंगते भृगोः पुत्रे तथा सम्मुखमागते।
नष्टे जीवे निरंशे वा नैव संचालयेद्वधूम् ॥

अर्थ--शुक्र अस्त हो अथवा संमुख हो तथा बृहस्पति अंश रहित अथवा अस्त हो तो द्विरागमन न करे।

गर्भिण्या बालकेनापि नववध्वा द्विरागमे ।
पदमेकं न गन्तव्यं शुक्रे सम्मुखदक्षिणे ॥

अर्थ--शुक्र यदि सम्मुख वा दक्षिण हो तो गर्भिणी वा बालक के सहित अथवा नवीना का द्विरागमन न करे ॥

विशेष—

काश्यपेषु वशिष्ठेषु चात्रिभृग्वङ्गिरस्सु च ।
भारद्वाजेषु वात्स्येषु प्रतिशुक्रो न दुष्यति ॥

अर्थ--काश्यप, वशिष्ठ, अत्रि, भृगु, अंगिरा, भरद्वाज, वत्स इनके गोत्रों में सम्मुख शुक्र का दोष नहीं है ॥

रेवत्यादि मृगान्तञ्च यावत्तिष्ठति चन्द्रमाः ।
तावच्छुक्रो भवेदन्धः सम्मुखे दक्षिणे शुभः ॥

अर्थ—रेवती से मृगशिरा पर्य्यन्त जब तक चन्द्रमा रहते हैं तब तक शुक्र अन्ध रहता है । इन में संमुख दक्षिण शुक्र का दोष नहीं होता है ॥

अस्तेऽथवा शिशुत्वे वा बालत्वे गुरुशुक्रयोः ।
शुभो द्विरागमो यावद् वर्षमेकं विवाहतः ॥

अर्थ—गुरु शुक्र के अस्त शिशुत्व, वृद्धत्व में भी विवाह से १ वर्ष के भीतर द्विरागमन शुभ है ।

तथा च—

स्वभवन–पुर–प्रवेशे देशानां विभ्रमे तथोद्वाहे ।
नूतनवध्वा गमने प्रतिशुक्रो नैव दोषकृद्भवति ॥

अर्थ—अपने भवन और नगर के प्रवेश में, देशोपद्रव में तथा नूतन वधूप्रवेश में प्रतिशुक्र (संमुख शुक्र) का दोष नहीं होता है ॥

पुनः विशेष--

सम्मुखे दक्षिणे राहौ शुभो वध्वा द्विरागमः ।
द्विरागम गता कन्या चागता पितृवेश्मनि ॥
बालिका युवती वापि ततो भर्तृगृहं प्रति ।
पदमेकं न गच्छेत्सा राहौ सम्मुखदक्षिणे ॥

अर्थ—सम्मुख दक्षिण राहु में द्विरागमन शुभ है। द्विरागमन में पति के भवन जाकर फिर पिता के गृह में आवे तो बाला रहे वा युवती सम्मुख दक्षिण राहु में स्वामी के भवन प्रति एक पद भी न चले ॥

॥ इति द्विरागमन प्रकरण ॥

प्रथम रजोदर्शन फल—

आद्यं रजः शुभं माघमार्गराधेषफाल्गुने ।
ज्येष्ठश्रावणयोः शुक्ले सद्वारे सत्तनौ दिवा ॥
श्रुतित्रयमृदुक्षिप्रध्रुवस्वातौ सिताम्वरे ।
मध्यं च मूलादितिभे पितृमिश्रे परेष्वसत् ॥

अर्थ—माघ, मार्गशीर्ष, वैशाख, आश्विन, फाल्गुन, ज्येष्ठ, श्रावण मास, शुक्ल पक्ष, शुभ ग्रह के दिन, शुभ लग्न, दिन के समय, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, मृदु क्षिप्र ध्रुव संज्ञक स्वाती नक्षत्र, और उजला वस्त्र इन सबों में स्त्रियों का प्रथम मासिक

धर्म होना शुभ है। तथा मूल पुनर्वसु मघा मिश्र संज्ञक इन नक्षत्रों में मध्यम और शेष मास वारादि में अशुभ है।

गर्भाधान मुहूर्त—

गण्डान्तं त्रिविधं त्यजेन्निधनजन्मर्क्षे च मूलान्तकं
दास्रं पौष्णमथोपरागदिवसं पातं तथा वैधृतिम्
पित्रोः श्राद्धदिनं दिवा च परिघाद्यर्धं स्वपत्नीगमे।
भान्युत्पातहतानि मृत्युभवनं जन्मर्क्षतः पापभम् ॥

अर्थ—तीनों प्रकार के गण्डान्त, सप्तम तारा, जन्म तारा, मूल भरणी अश्विनी रेवती और ग्रहण दिन, पात योग, वैधृति योग, माता पिता के श्राद्ध दिन तथा दिवस, परिघ योग का पूर्वार्ध, उत्पात हत नक्षत्र, जन्म राशि से अष्टम राशि लग्न में हो और पापग्रह की राशि इन सबों को अपनी स्त्री के समागम में त्याग करना चाहिये।

तथा च—

भद्राषष्ठीपर्वरिक्ताश्चसन्ध्याभौमार्कार्कीनाद्यरात्रीश्चतस्रः।
गर्भाधानंत्र्युत्तरेन्द्वर्कमैत्रब्राह्मस्वातीविष्णुवस्वम्बुपे सत् ॥

अर्थ—भद्रा, षष्ठी, पर्व दिन, रिक्ता तिथि, सन्ध्या समय, मंगल रवि शनिवार, रजो दर्शन से चार रात्रि इन सबों को छोड़ कर, तीनों उत्तरा, मृगशिरा, हस्त, अनुराधा, रोहिणी, स्वाती, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा इन नक्षत्रों में गर्भाधान शुभ है ॥

गण्डान्त में जन्मनिषेध—

नक्षत्रराशिगण्डान्ते यदि जन्म भवेत्तदा।
शान्तिः कार्या प्रयत्नेन तत्पित्रा विधिपूर्विका ॥

अर्थ—यदि नक्षत्र राशि गण्डान्त में किसी का जन्म हो तो उसका पिता अवश्य दोष निवृत्ति के लिये विधिपूर्वक शान्ति करे ॥

सीमन्त पुंसवन मुहूर्त—

जीवार्कारदिने मृगेज्यनिऋतिश्रोत्रादितिब्रध्नभैः
रिक्तामार्करसाष्टवर्ज्यतिथिभिःषष्ठेऽष्टमे मासि वा ।
सीमन्तोऽथ तृतीयमासि शुभदैः केन्द्रत्रिकोणे खलै-
र्लाभारित्रिषु पुंसवं शुभयुते लग्ने च पुंभांशके ॥

अर्थ—वृहस्पति, रवि या मंगल के दिन में, मृगशिरा, पुष्य, मूल, श्रवण, पुनर्वसु, हस्त, इन नक्षत्रों में, रिक्ता अमावास्या द्वादशी षष्ठी अष्टमी इन तिथियों को छोड़ कर और तिथियों में शुभग्रह केन्द्र त्रिकोण में हों पापग्रह ३, ६, ११, वें स्थान में हों, शुभ तथा पुरुष राशि का नवांश लग्न में हो तो ६ वा ८ वें मास में सीमन्त, तथा तीसरे ३ मास में पुंसवन कर्म शुभ है ॥

अथ जातकर्म—

पर्वरिक्तोनसद्वारे मृदुक्षिप्रचरध्रुवे ।
जन्मन्येकादशे वाऽह्नि द्वादशे जातकर्म सत् ॥

अर्थ—पर्व, रिक्ता रहित तिथि तथा शुभ दिन में मृदु संज्ञक क्षिप्र चर ध्रुवसंज्ञक नक्षत्रों में जन्म दिन में तथा ११ वें अथवा १२ वें दिन में जातकर्म शुभ है ॥

शिशुविलोकन—

तृतीये मासि तुर्ये वा यात्रोक्तेऽह्न्यर्कचन्द्रयोः ।
वारे च कुलरीत्या वा शुभं शिशुविलोकनम् ॥

अर्थ--तृतीय वा चतुर्थ महीने में यात्रा में कथित मुहूर्तों में वा रवि चन्द्रवार में अपने कुलानुसार बालक को देखना शुभ है ॥

दुग्धदान--

रिक्तां भौमं परित्यज्य विष्टिं पातं सवैधृतिम् ।
मृदुध्रुवक्षिप्रभेषु स्तन्यपानं हितं शिशोः ॥

अर्थ--रिक्ता तिथि, मंगलवार, भद्रा, पात, वैधृति योग इनको छोड़ कर बाकी दिन और तिथि में तथा मृदु ध्रुव क्षिप्र संज्ञक नक्षत्रों में बालक को स्तनपान कराना शुभ है ॥

सूती स्नान

व्यर्कषड्वसुरिक्तेह्नि कुजेर्केज्ये ध्रुवे करे ।
विचित्रमृदुवाताश्वे सूतिस्नानं शुभं स्मृतम् ॥

अर्थ--१२, ६, ८, रिक्ता इनसे भिन्न तिथियों में, मंगल, रवि, गुरुवार में, चित्रा को छोड़कर मृदु संज्ञक (मृगशिरा, रेवती अनुराधा) स्वाती अश्विनी इन नक्षत्रों में सूतीस्नान शुभ है ॥

अथ नामकरण— (नारद-मनू)

सूतकान्ते नामकर्म विधेयं स्वकुलोचितम् ।
पुण्ये तिथौ मुहूर्ते वा नक्षत्रे वा गुणान्विते ॥

अर्थ--जन्मसूतक के अन्त में (अर्थात ब्राह्मण का ११ वें दिन, क्षत्रिय का १३ वें दिन, वैश्यका १६ वें दिन, शूद्र का ३१ वें दिन में) अपने कुलानुसार बालक का नाम धरे । वा पुण्यतिथि, पुण्य मुहूर्त, वा पुण्य नक्षत्र में नामकरण शुभ है ॥

दन्तोत्पत्तिकथन—

जन्मतः पञ्चमासेषु दन्तोत्पत्तिर्न शोभना ।
शुभा षष्ठादिके ज्ञेया न सदन्तजनिःशुभा ॥

अर्थ—जन्म से पांच महीने तक दन्त निकलना शुभ नहीं है । और छठे आदि महीनों में शुभ है । तथा दन्त सहित बालक का जन्म शुभ नहीं है ॥

दोलारोहण—निष्क्रमण मुहूर्त—

जन्मार्कभूपधृतिदिङ्मितवासरे स्याद्वारे शुभे मृदुलघुध्रुवभैः शिशूनाम् । दोलाधिरूढिरथ निष्क्रमणं चतुर्थमासे गमोक्तसमयेऽर्कमितेऽह्नि वा स्यात् ॥

अर्थ—जन्म से १०, १२, १६, १८ वें दिन में शुभग्रह के वार में, मृदु लघु ध्रुव संज्ञक नक्षत्रों में बालक को दोलापर चढ़ाना शुभ है । तथा चौथे महीने में वा जन्म से १२ वें दिन में यात्रोक्त मुहूर्त में बालक को प्रथम घर से बाहर लेजाना शुभ है ॥

जन्मनक्षत्र में वर्ज्य—

निष्कासनं प्राशनकर्णवेधौ क्षौरं विवादं गमनं च युद्धम् ।
श्राद्धं गृहं वा कृषिभेषजौ च न जन्मभे शस्तमुशन्ति सन्तः ॥

अर्थ—निष्कासन, अन्नप्राशन, कर्णवेध और विवाद (मोकदमा आदि कलह) यात्रा, युद्ध, खेती, औषधी ये जन्मनक्षत्र में नहीं करना चाहिये ॥

अथ अन्नप्राशन—

पूर्वार्द्राभरणीभुजङ्गवरुणांस्त्यक्त्वा कुजार्कौ तथा

नन्दां पर्व च सप्तमीमपि तथा रिक्तामपि द्वादशीम्।
स्यात् षष्ठाष्टममासि चान्नमशनं स्त्रीणां पुनः पञ्चमे
गोकन्याझषमन्मथेषु धवले पक्षे च योगे शुभे ॥

अर्थ--तीनों पूर्वा, आर्द्रा, भरणी, आश्लेषा, शतभिषा, नक्षत्र तथा मंगल शनिवार और नन्दा पर्व सप्तमी रिक्ता द्वादशी तिथि इन सबों को छोड़ कर अवशिष्ट नक्षत्र तिथि वार में बालक को ६, ८ वें मास में, कन्या को ५ वें मास में, वृष कन्या मीन मिथुन लग्न में शुक्ल पक्ष में शुभ योग में प्रथम अन्न भोजन कराना शुभ है॥

कर्णवेध—

हित्वैतांश्चैत्रपौषावमहरिशयनं जन्ममासं च रिक्तां
युग्माब्दं जन्मतारामृतुमुनिवसुभिःसम्मिते मास्यथो वा।
जन्माहात् सूर्यभूपैः परिमितदिवसे ज्ञेज्यशुक्रेन्दुवारे-
ऽथोजाब्दे विष्णुयुग्मादितिमृदुलघुभैः कर्णवेधः प्रशस्तः॥

अर्थ—चैत्र पौष तिथिक्षय हरिशयन, जन्ममास रिक्तातिथि, समवर्ष जन्म तारा इन सबों को छोड़, वाकी मास और तिथि में ६, ७, ८ वें महीने में वा जन्म से १२, १६ वें दिन में बुध, बृहस्पति, शुक्र, सोमवार में विषमवर्ष में श्रवण, धनिष्ठा, पुनर्वसू मृदु लघु संज्ञक नक्षत्रों में कर्णवेध शुभ है॥

अथ चूडाकरण (मुण्डन) मुहूर्त—

शाक्रोपेतैर्विमैत्रैश्च मृदुक्षिप्रचरैस्तथा।
कर्णवेधोक्तवर्षादौ चौलं लग्ने शुभे शुभम्॥

अर्थ—कर्णवेधोक्त वर्ष मास दिन में, तथा अनुराधा को

छोड़कर मृदु क्षिप्र चरसंज्ञक तथा ज्येष्ठा नक्षत्र में, तथा शुभ लग्न में चूड़ाकरण (मुण्डन) शुभ है ॥

विशेष—

ऋतुमत्याः सूतिकायाः सूनोश्चौलादि नाचरेत् ।
ज्येष्ठापत्यस्य न ज्येष्ठे कैश्चिन्मार्गेऽपि नेष्यते ॥

अर्थ—ऋतुमती (मासधर्मसहित) और प्रसूतिका के बालक का मुण्डन, उपनयन आदि न करावे ; तथा ज्येष्ठ सन्तान का ज्येष्ठ में और किसी के मत से अगहन में भी चूड़ाकरण आदि न करावै ॥

पञ्चमासाधिके मातुर्गर्भे चौलं शिशोर्न सत् ।
पञ्चवर्षाधिकस्येष्टं गर्भिण्यामपि मातरि ॥

अर्थ—माता के गर्भ को पांच मास से अधिक हुआ हो तो उस बालक का मुण्डन शुभ नहीं है अगर बालक ५ वर्ष से अधिक वयस का हो तो माता के गर्भ रहने पर भी मुण्डन शुभ होता है ॥

सामान्यक्षौरकर्म—

त्यक्त्वा रिक्तार्कभौमार्कीन् हितं क्षौरं च चौलभे ।
नैव क्षौरक्रिया कार्या स्नाताभ्यक्तकृताशनैः ॥

अर्थ—रिक्तातिथि रवि मंगल शनिवार को छोड़कर बाकी तिथि और दिन में तथा चूड़ाकरणोक्त नक्षत्र में क्षौर कराना शुभ है । तथा स्नान करके, तैल लगाकरके और भोजन करके क्षौर क्रिया न करावै ॥

विशेष—

नृपविप्राज्ञया यज्ञे मरणे बन्धमोक्षणे ।
प्रयागेऽखिलवारर्क्षतिथिषु क्षौरमिष्टदम् ॥

अर्थ--राजा तथा ब्राह्मण की आज्ञा से, यज्ञ में, मरणाशौच में, कैद से छूटने पर और प्रयाग में सब तिथि वार नक्षत्र में क्षौर शुभ है ॥

निषिद्धवारादि में क्षौर कराने का मन्त्र—

श्रीपतिः—केशवमानर्तपुरं पाटलिपुत्रं पुरीमहीच्छत्रम् ।
दितिमदितिं च स्मरतां क्षौरविधौ भवति कल्याणम् ॥

अथ–उपनयनवर्षशुद्धि—

विप्राणां च शुभं व्रतं निगदितं वर्षेऽष्टमे पञ्चमे ।
शुद्धेऽर्के च गुरौ तथा क्षितिभुजां षष्ठेथवैकादशे ॥
वैश्यानां च तथाष्टमेऽतिशुभदं वा द्वादशे वत्सरे ।
कालेऽथ द्विगुणे गते निगदितं गौणं तदाहुर्बुधाः ॥

अर्थ--जन्म से वा गर्भ से–पञ्चम वा अष्टम वर्ष में ब्राह्मणों का तथा ६ ठे वा ११ वें वर्ष में क्षत्रियों का और ८ वें वा १२ वें वर्ष में वैश्यों का उपनयन शुभ है । अथवा उपरोक्त काल के दूना समय तक गुरु शुद्धि तथा रवि शुद्धि से उपनयन शुभ है; किन्तु इसको पण्डितों ने गौणपक्ष कहा है ॥

उपनयन मुहूर्त--

जलभे चाश्वभे हस्तत्रये च श्रवणत्रये ।
ज्येष्ठाभाग्यमृगे पुष्ये रेवत्यां चोत्तरायणे ॥
द्वितीयायां तृतीयायां पञ्चम्यां दशमीत्रये ।
रवौ सोमे गुरौ शुक्रे बुधेवारे सितेदले ।
कन्यायुग्मधनुःसिंहवृषलग्नेषु सद्व्रतम् ।
[illegible] लग्नस्य शशिशुद्धिमथापि चिन्तयेत् ॥

अर्थ—पूर्वाषाढ, अश्विनी, हस्त, चित्रा, स्वाती, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, ज्येष्ठा, पूर्वाफाल्गुनी, मृगशिरा, पुष्य इन नक्षत्रों में उत्तरायण में २,३, ५, १०, ११, १२ इन तिथियों में, रवि सोम बुध बृहस्पति शुक्र इन वारों में, शुक्लपक्ष में कन्या मिथुन धनु सिंह वृष इन लग्नों में उपनयन शुभ है। सर्वारम्भ में जो लग्न शुद्धि कही गयी है वह उपनयन में भी विचारै ॥

विशेष—

जन्मर्क्षमासलग्नादौ व्रते विद्याधिको व्रती ।
आद्यगर्भेऽपि विप्राणां क्षत्रादीनामनादिमे ॥

अर्थ–जन्मनक्षत्र, जन्ममास, जन्मलग्न, आदि में ब्राह्मण के प्रथम सन्तान का और क्षत्रिय वैश्य के द्वितीय आदि बालक का उननयन होने से विद्यावान होता है ॥

अनध्याय—

पौषे माघे शुचौ ज्येष्ठे रुद्रार्कदिग्द्विसम्मिताः ।
तिथ्यः क्रमादनध्यायाः व्रतवन्धे न ते शुभाः ॥

अर्थ–पौष की ११, माघ की १२, आषाढ की १०, ज्येष्ठ की २ ये तिथियां व्रतवन्ध में अनध्याय हैं ॥

निषेध

कृष्णे प्रदोषेऽनध्याये शनौ निश्यपराह्णके ।
प्राक्सन्ध्यागर्जिते नेष्टो व्रतवन्धो गलग्रहे ॥

अर्थ—कृष्णपक्ष में, अनध्याय में, शनिवार में, रात्रि में, अपराह्ण में, प्रातःकाल गर्जना हो तो तथा गलग्रह में उपनयन अशुभ है ॥

प्रदोषलक्षण—

अर्क तर्क त्रितिथिषु प्रदोषः स्यात्तदग्रिमैः ।
रात्र्यर्धसार्धप्रहरयाममध्यस्थितैः क्रमात् ॥

अर्थ—द्वादशी में अस्त के बाद मध्य रात्रि के भीतर त्रयोदशी हो, तथा षष्ठी में सायंकाल से डेढ़ प्रहर रात्रि के भीतर सप्तमी हो, तृतीया में १ प्रहर रात्रि के मध्य में चतुर्थी का प्रवेश हो तो प्रदोष होता है ॥

गलग्रह तिथि—

त्रयोदश्यादि चत्वारि सप्तम्यादि दिनत्रयम् ।
चतुर्थी चैकतः प्रोक्ता अष्टावेते गलग्रहाः ॥

अर्थ—१३, १४, १५, १, ४, ७, ८, ९ ये तिथियां गलग्रह हैं ॥

अथ समावर्तन—

केशान्तं षोडशेवर्षे चौलोक्तदिवसे शुभम् ।
व्रतोक्तदिवसादौ हि समावर्तनमिष्यते ॥

अर्थ—१६ वें वर्ष में चूड़ाकरणोक्त मुहूर्त में केशान्तकर्म, और उपनयनोक्त मुहूर्त में समावर्तन कर्म शुभ है ॥

अथ अक्षरारम्भ मुहूर्त—

पञ्चमेऽब्दे गणेशादीन् पूजयित्वोत्तरायणे ।
लघुश्रोत्रानिलान्त्येशतक्षादितिभमित्रभे ॥
शिवार्कदिग्द्विषट्पञ्चत्रिसंख्ये च तिथौ दिने ।
व्यार्कि भौमे चरे द्व्यंगे लग्ने सन् स्याल्लिपिग्रहः ॥

अर्थ—पञ्चम वर्ष में उत्तरायण समय में ११, १२, १०,

२, ३, ५, ६, इन तिथियों में लघु संज्ञक श्रवण, स्वाती रेवती आर्द्रा चित्रा पुनर्वसु, अनुराधा इन नक्षत्रों में, मंगल शनि को छोड़कर बाकी दिन में गणेश, विष्णु सरस्वती लक्ष्मी इष्ट देव आदि के पूजन करके प्रथम अक्षरारम्भ करना शुभ है ॥

विद्यारम्भ--

मृगादिपञ्चके हस्तत्रिके विष्णुत्रिकाश्विभे ।
मैत्रान्त्यमूलपूर्वासु विद्यारम्भः शुभे दिने ॥

अर्थ—मृगशिरा आर्द्रा पुनर्वसू पुष्य आश्लेषा, हस्त चित्रा स्वाती, श्रवण धनिष्ठा शतभिषा, अश्विनी अनुराधा मूल तीनों पूर्वा इन नक्षत्रों में, रवि बुध गुरु शुक्र दिन में विद्यारम्भ शुभ है ॥

स्त्रीवस्त्रादिधारण—

करादिपञ्चकेऽश्विन्यां धनिष्ठायां च पूषणि ।
धार्यं ज्ञेऽर्के गुरौ शुक्रे स्त्रीभिर्वस्त्रविभूषणम् ॥

अर्थ—हस्त चित्रा स्वाती विशाखा अनुराधा अश्विनी धनिष्ठा रेवती इन नक्षत्रों में बुध रवि बृहस्पति शुक्र इन दिनों में स्त्री नवीन वस्त्र भूषण धारण करै ॥

पुरुषवस्त्रधारण—

पुंभिः पूषादितिद्वन्द्वे रोहिण्युत्तरभेष्वपि ।
गोकन्यायुग्ममीनेषु लग्नेषु च नवाम्बरम् ॥

अर्थ—पूर्वोक्तनक्षत्र दिन तथा रेवती पुनर्वसू पुष्य रोहिणी तीनों उत्तरा इन नक्षत्रों में भी, वृष कन्या मिथुन मीन इन लग्नों में पुरुष नवीन वस्त्र धारण करै ॥

स्त्रीकेशबन्धन मुहूर्त—

स्वात्युत्तरश्रवणशङ्कर भाश्वमूलपुष्यादितीन्दुकर-
पौष्णशचीशभेषु । पक्षे सिते विकुजसौरिदिने
सुलग्ने स्यात्केशबन्धनविधिः शुभदो मृगाक्ष्याः ॥

अर्थ—स्वाती तीनों उत्तरा श्रवण आर्द्रा अश्विनी मूल पुष्य पुनर्वसु मृगशिरा रेवती ज्येष्ठा इन नक्षत्रों में शुक्ल पक्ष में शनि मंगल छोड़कर और दिन में शुभ लग्न में स्त्रियों का केशबन्धन शुभ है ॥

वस्त्रक्षालन मुहूर्त—

करपञ्चाश्विनीपुष्यवसुभे व्यार्किवित्कुजे ।
षष्ठीरिक्तोनतिथ्यां च वस्त्राणां क्षालनं शुभम् ॥

अर्थ—हस्त चित्रा स्वाती विशाखा अनुराधा अश्विनी पुष्य धनिष्ठा इन नक्षत्रों में, शनि बुध मंगल को छोड़कर अन्य वारों में तथा रिक्ता षष्ठी से भिन्न तिथियों में कपड़ा धोलाना शुभ है ॥

दन्तधावन—

रूपरामरसभूतपूर्णिमानागदर्शरविसङ्क्रमे दिने ।
श्राद्धयज्ञनियमेषु पण्डितैर्दन्तकाष्ठकरणं न कीर्तितम् ॥

अर्थ—१, ३, ६, १४, ५, ८, । अमावास्या इन तिथियों में रवि सङ्क्रान्ति दिन में श्राद्ध यज्ञ व्रत में काष्ठ के दतवन करै ॥

औषधभक्षण मुहूर्त—

मृदुमूलचरक्षिप्रे व्यार्किभौमदिने शुभे ।
द्व्यङ्गलग्नेऽष्टमे शुद्धे सत्तिथौ भेषजं शुभम् ॥

अर्थ—मृदुसंज्ञक मूल चर क्षिप्र संज्ञक नक्षत्रों में शनि मंगल छोड़ कर और दिन में द्विस्वभाव राशि लग्न हो उसमें शुभ ग्रह हो और शुभ तिथि में औषध खाना शुभ है ॥

रोगविमुक्तस्नान—

त्यन्त्यादितिध्रुवमघानिलसार्पधिष्ण्ये रिक्ते तिथौ चरतनौ विकवीन्दुवारे । स्नानं रुजा विरहितस्य जनस्य शस्तं हीने विधौ खलखगैर्भवकेन्द्रकोणे ॥

अर्थ—रेवती पुनर्वसू ध्रुव संज्ञक मघा स्वाती आश्लेषा इन से भिन्न नक्षत्रों में रिक्ता तिथियों में चर लग्न में, शुक्र और सोम को छोड़कर और दिनों में चन्द्रमा क्षीणवली हो पाप ग्रह ११ और केन्द्र त्रिकोण में हो ऐसे लग्न में रोग छूटने पर स्नान शुभ है ॥

स्त्रियों के लिये शतभिषा स्नान निषेध—

चन्द्रे शतभिषां प्राप्ते नारी न स्नानमाचरेत् ।
भ्रमात् स्नाता तदा पुष्पैः गन्धाद्यैःपूजयेत्पतिम् ॥

अर्थ—चन्द्रमा जिस दिन शतभिषा नक्षत्र में रहै उस दिन स्त्री स्नान न करै । कदाचित् भ्रम से स्नान करै तो गन्ध पुष्पादि से पति का पूजन करै तो दोष नाश होता है ॥

अथ गृहप्रकरण ।

तत्र वास्तुभूमिशुभाशुभ लक्षण—

पूर्वोत्तरस्रवा भूमिः सुप्रसन्ना समापि च ।
ईशस्रवा निरुच्छिष्टा प्रशस्ता वास्तुकर्मणि ॥

दक्षिणापरनीचाभूः सोषरा विषमापि वा ।
वृक्षच्छायासमायुक्ता वर्जनीया प्रयत्नतः ॥
उक्ताभ्योऽन्यस्वरूपा तु मध्यमा परिकीर्तिता ।
तस्यामपि वसेच्छान्त्याऽथवा देवद्विजाज्ञया ॥

अर्थ—जो भूमि पूर्व तथा उत्तर दिशा में क्रम से नीचे हो अथवा समान हो वा ईशानकोण में नीचे हो, देखने में सुन्दर मालुम हो, जहाँ से पहले कोई वास करके चला न गया हो, ऐसी भूमि वास करने में शुभ है । जो भूमि दक्षिण या पश्चिम दिशा में झुकी हो, ऊसर हो, या नीचा ऊँचा गढ़ा इत्यादि वाली हो, देखने से मन प्रसन्न न होता हो, जहाँ वृक्ष की छाया दिन भर रहती हो ऐसी भूमि में वास नहीं करना चाहिये । और इन दोनों से भिन्न लक्षण वाली भूमि मध्यम है, उस में भी देवादिकों की शांती करके ब्राह्मणों की आज्ञा से वास करना शुभ है ॥

अथ भूमिवर्ण—

श्वेता च ब्राह्मणी भूमिः क्षत्रियारुणविग्रहा ।
वैश्या पीततरा ख्याता कृष्णा शूद्राभिधीयते ॥
ब्राह्मणी ब्राह्मणस्योक्ता क्षत्रिया क्षत्रियस्य च ।
वैश्या वैश्यस्य निर्दिष्टा शूद्रा शूद्रस्य शस्यते ॥

अर्थ—श्वेत वर्ण भूमि ब्राह्मणी, लाल वर्ण भूमि क्षत्रिया, पीले वर्ण की वैश्या (वैश्यजाति), काले वर्ण की भूमि शूद्रा कहलाती है । ब्राह्मणी भूमि ब्राह्मण को. क्षत्रिया क्षत्रिय को, वैश्या वैश्य वर्ण को, शूद्रा भूमि शूद्र को शुभ देने वाली होती है ॥

अथ शल्योद्धारः—

स्मृत्वेष्टदेवतां प्रश्नवचनस्याद्यमक्षरम् ।
गृहीत्वा तु ततः शल्याशल्यं सम्यग्विचारयेत् ॥

अर्थ—इष्ट देवता को स्मरण कर के आदि अक्षर से शल्य है या नहीं । है तो कहाँ है इत्यादि विचार करै ॥

अकचटतपयश-हपया वर्णाः पूर्वादि मध्येषु ।
शल्यकरा इह नान्ये शल्यगृहे निवसतां नाशः ॥

अर्थ—यदि प्रश्न के आदि में अ-क-च-ट-प-य-श-ह-प-य ये वर्ण पड़ें तो यथा क्रम से पूर्वादि दिशाओं में तथा हपय से मध्य में भी शल्य कहना, अन्य अक्षर पड़े तो शल्य नहीं है ऐसा कहना ॥

शल्यज्ञान—

प्रश्नाद्ये यदि 'अः' प्राच्यां नरशल्यं तदा भवेत् ।
सार्द्धहस्तप्रमाणेन तच्च मानुष्यमृत्युकृत् ॥
आग्नेयां यदि कः प्रश्ने शशशल्यं करद्वये ।
राजदण्डो भवेत्तत्र भयं नैव निवर्तते ॥
याम्यायां यदि चः प्रश्ने कुर्यादाकटिसंस्थितम् ।
नरशल्यं गृहेशस्य मरणं चिररोगता ॥
नैर्ऋत्यां यदि टः प्रश्ने सार्द्धहस्तादधस्तले ।
शुनोऽस्थि जायते तच्च बालानां जनयेन्मृतिम् ॥
तः प्रश्ने पश्चिमायां तु शिशोः शल्यं प्रजायते ।
सार्द्धहस्तमिते तत्र स्वामिनं नेच्छति ध्रुवम् ॥
वायव्यां यदि पः प्रश्ने तुषाङ्गारश्चतुः करे ।

कुर्वन्ति मित्रनाशं च दुःस्वप्नदर्शनन्तथा ॥
उदीच्यां यदि यः प्रश्ने तदा शल्यं कटेरधः ।
तद्गृहे निर्धनत्वं च कुवेरसदृशं यदि ॥
ऐशान्यां यदि शः प्रश्ने गोशल्यं सार्धहस्ततः ।
तद् गोधनानां नाशाय जायते गृहमेधिनः ॥
हपया मध्यकोष्ठे च वक्षोमात्रं भवेदधः ।
नृकपालमथो भस्म लौहं तत्कुलनाशकृत् ॥

अर्थ--जिस भूमि में शल्य विचार करना हो उस भूमि को नौ भाग बनावे । प्रश्न के आदि अक्षर में यदि 'अ' हो तो पूर्व भाग में डेढ़ हाथ नीचे मनुष्य का शल्य कहना वह नाशकारक होता है । यदि प्रश्न में ककार हो तो अग्निकोण में २ हाथ नीचे शशक (खरहा आदि) का शल्य राजदण्ड कारक होता है । प्रश्नादि में चकार हो तो दक्षिण भाग में कटि पर्यन्त नीचे मनुष्य का शल्य गृहपति को मारने वाला और रोगी करने वाला होता है । प्रश्नादि में टकार हो तो नैऋत्य कोण में डेढ हाथ नीचे कुत्ते का शल्य कहना वह बालकों का मरण कारक होता है । यदि तकार हो तो पश्चिम में बच्चों का शल्य कहना वह गृहेश को अशुभ कारक होता है । यदि पकार हो तो वायव्य कोण में भूसा अथवा कोयला आदि कहना वहाँ मित्र का नाश और दुःस्वप्न देखने में आता है । यदि प्रश्नादि में यकार हो तो उत्तर भाग में डाँर भर नीचे शल्य कहना वह दारिद्र्य कारक होता है । यदि प्रश्नादि में शकार हो तो ईशानकोण में गोशल्य डेढ हाथ नीचे कहना वह पशुओं का नाशकारक होता है । यदि प्रश्नादि में ह-प-य

अक्षर हों तो मध्य भाग में मनुष्य के कपाल वा भस्म अथवा लौह छाती प्रमाण नीचे में कहना वह कुलनाशकारक होता है। विशेष—प, पश्चिम, और 'य' वायव्य में कहा गया है और इन दोनों अक्षर से मध्य में भी शल्य समझना ॥

अथ शुभाशुभभूमि परीक्षा—

"हस्तमात्रं खनेत्खातं जलेनैव प्रपूरयेत् ।
पूरिते वास्तुकर्ता च गच्छेत्पदशतं पुनः ॥
समागत्याम्भसां वृद्धिं दृष्ट्वा वृद्धिरनुत्तमा ।
समेऽपि स्यान्महावृद्धिः क्षये क्षयमथादिशेत् ॥

अर्थ—जिस भूमि में वास्तु करना हो उस भूमि में एक हाथ लम्बा एक हाथ चौड़ा एक हाथ गहिरा खात बना कर उसको जल से पूरित करके वास्तुकर्ता वहाँ से एक सौ पद चल कर फिर वहाँ आवे। यदि खात में जल बढ़ जाय तो अत्यन्त वृद्धि, यदि जल न बढ़े न घटे तो भी वृद्धि देनेवाली भूमि होती है, यदि जल घट जाय तो हानि करने वाली भूमि समझना ॥

अथ गृहसमीप में शुभ वृक्ष—

यत्र तत्र स्थिता वृक्षो बिल्वदाडिमकेसराः ।
पनसो नारिकेलश्च शुभं कुर्वन्ति नित्यशः ॥
जम्बीरश्च रसालश्च रम्भाशेफालिकास्तथा ।
निम्बाशोकशिरीषाश्च मल्लिकाद्याः शुभप्रदाः ॥

अर्थ—वेल, दाडिम, केसर, (नागकेसर, मौलसरी), कटहर, नारिकेल ये वृक्ष सर्वत्र शुभ होते हैं तथा नीबू, आम, केला,

शृंगारहार, नीम, अशोक, शिरीष तथा मल्लिका ये वृक्ष भी घर के समीप में शुभ हैं ॥

अथ अशुभ वृक्ष—

मालतीं चैव चम्पां च केतकीं कुन्दमेव च।
मुनिवृक्षं ब्रह्मवृक्षं वर्जयेद् गृहसन्निधौ ॥
तिन्तिलीको वटः प्लक्षः पिप्पलश्च सकोटरः।
क्षीरी च कण्टकी चैव निषिद्धास्ते महीरुहाः ॥

अर्थ—मालती, चम्पा, केवला, कुन्द, अगस्त्य, ब्रह्मवृक्ष, ये घर के समीप में वर्जित हैं तथा, तेतर, वड़, पाकड़, पीपर, तथा खोधर वाला वृक्ष और जिसमें दूध होता हो तथा काँटा वाले जितने वृक्ष हैं ये घर के समीप में निषिद्ध हैं ॥

विशेष—

वृक्षप्रासादिनी छाया सञ्छन्नं यदि मन्दिरम्।
अचिरेणैव कालेन उद्वासं जायते ध्रुवम् ॥

अर्थ—वृक्ष की छाया यदि सर्वदा (दिन भर) घर पर पड़ती हो तो वहाँ से शीघ्र उपट कर दूसरे स्थान में जाना पड़ता है। इसलिये ऐसे स्थान में वास न करै ॥

प्रथमान्तयामवर्ज्यं च द्वित्रिप्रहरसम्भवा।
छाया वृक्षध्वजादीनां सदा दुःखप्रदायिनी ॥

अर्थ—प्रथम और चतुर्थ प्रहर को छोड़ कर, दूसरे और तीसरे प्रहर में वृक्ष अथवा ध्वजा आदि की छाया मकान पर पड़ै तो वह अशुभ होती है ॥

प्रथम गृहकर्म-(वास्तु)-

तत्र वास्तु योग्य ग्राम विचार—

यद्भं द्व्यङ्कसुतेशदिङ्मितमसौ ग्रामः शुभो नामभात् ।
स्वं वर्गं द्विगुणं विधाय परवर्गाढ्यं गजैः शेषितम् ॥
काकिण्यस्त्वनयोश्च तद्विवरतो यस्याऽधिकः सोऽर्थदो-
थऽद्वारं द्विजवैश्यशूद्रनृपराशीनां हितं पूर्वतः ॥

अर्थ—नाम राशि से ग्राम राशि तक गिनने से २,९,५,११, १० संख्या हो तो ग्राम शुभ होता है । अथ काकिणी विचार-नाम की वर्ग संख्या को दूना करके उसमें ग्राम की वर्गसंख्या (विवाह प्रकरण के ४३—४४ श्लोकोक्त) अवर्ग से गिन कर जोड़ कर ८ का भाग देने से जो शेष बचे वह नाम की काकिणी होती है । ऐसी ही ग्राम की वर्ग संख्या को दूना करके नाम की वर्ग संख्या जोड़ दे, उसमें ८ का भाग देने से जो शेष बचे वह ग्राम की काकिणी होती है । दोनों में जिसकी काकिणी अधिक होती है वह धन देनेवाला होता है । इसलिये ग्राम की अधिक काकिणी शुभ होती है ❀ ॥ द्वार विचार—ब्राह्मण वर्ण राशिवाले को पूर्व मुख, वैश्य वर्ण राशिवाले को दक्षिण मुख, शूद्र राशिवाले को पश्चिम मुख, क्षत्रिय राशि वाले को उत्तर मुख का द्वार शुभ है ॥

वर्ग की शर संख्या—

अ-क-च-ट-त-प-य-श वर्गाः पूर्वादीनां दिशां ज्ञेयाः ।

❀ यह रामाचार्य का मत है । नारदादि मुनि के वाक्य से स्पष्ट है कि नाम की काकिणी अधिक होने से शुभ (धनप्रद) होती है ।

तेषां वसुशररसयुगगिरिशशिगुणवाह्नः क्रमादङ्काः ॥

अर्थ—अवर्ग पूर्व दिशा के, कवर्ग अग्नि कोण के, चवर्ग दक्षिण के, टवर्ग नैऋत्य के तवर्ग पश्चिम के, पवर्ग वायुकोण के, यवर्ग उत्तर के, शवर्ग ईशान्य कोण के स्वामी हैं। तथा अवर्ग की शर संख्या ८, कवर्ग की ५, चवर्ग की ६, टवर्ग की ४, तवर्ग की ७, पवर्ग की १, यवर्ग की ३, शवर्ग की २, शर संख्या होती है ॥

अथ गृहदशाज्ञान (अर्थात् दिशा वश से शुभाशुभ गृह)

अवर्गादि शरैः सङ्ख्यां नामग्रामदिशामयीम् ।
नागैर्भागं समाहृत्य शेषं गृहदशा रवेः ॥
शुभानां च दशा शस्ता पापानामशुभा स्मृता ।
शनिसूर्यकुजाः पापाः गुरुज्ञेन्दुसिताः शुभाः ॥

अर्थ—नाम ग्राम और दिशा के वर्ग की शर संख्याओं का योग करके उसमें ८ का भाग देने से शेष रव्यादि ग्रह की गृहदशा होती है। शुभ ग्रह की दशा शुभ, पाप ग्रह की दशा अशुभ होती है। शनि रवि मंगल ये पाप ग्रह और बुध बृहस्पति शुक्र सोम ये शुभ ग्रह हैं ॥

उदाहरण—विचार करना है कि—जगन्नाथ चौधरी को नेहरा मौजे में दक्षिण दिशा का घर कैसा है—तो यहाँ नाम के चवर्ग की शर संख्या ६, ग्राम के तवर्ग की शर संख्या ७, दक्षिण दिशा का चवर्ग है, उसकी शर संख्या ६ सब के योग १९ में ८ का भाग देने से ३ शेष बचा, रवि से गिनने से मंगल की दशा हुई, यद्यपि मंगल पाप ग्रह है परञ्च सामवेदी के लिये मंगल शुभ है, इसलिये शुभ हुआ। इसी प्रकार और भी विचार करै ॥

वास्तु मुहूर्त—

रोहिण्यां श्रवणात्रयेऽदितियुगे हस्तत्रये मूलके
रेवत्युत्तरफल्गुनीन्दुतुरगे मित्रोत्तराषाढ़योः ।
शस्तं वास्तु कुजार्कवर्जितदिने गोकुम्भसिंहे झषे
कन्यायां मिथुने नभः शुचिसहोराधोर्जकं फाल्गुने ॥

अर्थ--रोहिणी श्रवण धनिष्ठा शतभिषा पुनर्वसु पुष्य हस्त चित्रा मूल रेवती उत्तरफाल्गुनी मृगशिरा अश्विनी अनुराधा उत्तराषाढ़ इन नक्षत्रों में, मंगल रवि को छोड़ कर और दिनों में, वृष मिथुन सिंह कन्या कुम्भ मीन इन लग्नों में श्रावण, आषाढ अगहन वैशाख कार्तिक फाल्गुन इन मासों में वास्तु (गृहारम्भ) शुभ होता है ॥

वृषवास्तुचक्रोद्धार—

सूर्याक्रान्ताच्यजेत् सप्त, शुभान्येकादशस्त्वथ ।
शेषं नन्दर्क्षकं दुष्टमिति वास्तुनि कीर्तितम् ॥

अर्थ--सूर्य जिस नक्षत्र में रहै उससे ७ नक्षत्र त्याग कर के बाद ११ नक्षत्र में गृहारम्भ शुभ है। उसके आगे ९ नक्षत्र अशुभ हैं। यह वास्तु में अवश्य विचार करै ॥

पृथ्वी शयन—

"प्रद्योतनात् पञ्च नगाङ्क सूर्य-नन्देन्दु-षड्विंशमितेषु भेषु ।
शेते महीनैव गृहं प्रकुर्यात् तड़ागवापीखननं न शस्तम् ॥"

अर्थ--सूर्य के नक्षत्र से ५ वें, ७ वें, ९ वें, १२ वें, १९ वें, २६ वें नक्षत्रों में पृथ्वी शयन करती है। इसलिये मकान, पोखरा, कूआँ का खनना आरम्भ न करै ॥

राहुसम्मुखमें विशेष—

यस्यां दिशि यदा राहुस्तस्यां द्वारं न कारयेत्।
प्रवेशः सम्मुखे राहौ नैव कार्यः कदाचन॥

अर्थ--जिस दिशा में जब राहु रहै उस दिशा में द्वार न बनावै और सन्मुख राहु में गृहप्रवेश न करै॥

अथ गृहप्रवेश मुहूर्त—

"आश्लेषां च विशाखया सह मघां पूर्वात्रयं याम्यभं
रिक्तां सूर्यकुजौ विहाय च कुहुं वेश्मप्रवेशः शुभः।
गोसिंहालिघटास्तथैव धवलः पक्षः प्रशस्तोऽधिको
मध्या मन्मथचापमीनवनिता मासास्तु वास्तूदिताः॥"

अर्थ--आश्लेषा विशाखा मघा तीनों पूर्वा भरणी नक्षत्र, रिक्ता तिथि, रवि भौमवार, अमावास्या इन सबों को छोड़कर अन्य तिथि नक्षत्र वार में, वृष, सिंह वृश्चिक कुम्भ मिथुन धन मीन कन्या लग्नों में तथा वास्तु में कथित मासों में गृहप्रवेश शुभ है॥

अथ जलाशयखनन—

"चित्रयुगे करपौष्णयुगेन्दौ मित्रधनोत्तरधातृजलेशे।
पुष्यमघादितिभे शुभवारे चैषु खनेत्सलिलाशयमिष्टम्॥"

अर्थ--चित्रा स्वाती हस्त रेवती अश्विनी मृगशिरा अनुराधा धनिष्ठा तीनों उत्तरा रोहिणी शतभिषा पुष्य मघा पुनर्वसू इन नक्षत्रों में शुभग्रहों के वार में जलाशय खनवाना शुभ है॥

अथ देवादिप्रतिष्ठा—

"प्राजेशशक्रहरिहस्तसमीरणेषु
मूलेन्दुमैत्रगुरुपौष्णशिवोत्तरेषु।

शस्ते दिने शुभतिथौ शशिनि प्रवृद्धौ
धन्यां वदन्ति निखिलां शुभदां प्रतिष्ठाम् ॥"

अर्थ--रोहिणी ज्येष्ठा श्रवण हस्त स्वाती मूल मृगशिरा अनुराधा पुष्य रेवती आर्द्रा तीनों उत्तरा, इन नक्षत्रों में शुभ ग्रह के दिन में शुभ तिथि में शुक्ल पक्ष में देवादि की प्रतिष्ठा शुभ है ॥

विशेष—

गीर्वाणाम्बुप्रतिष्ठा परिणयदहनाधानगेहप्रवेशा-
श्चौलं राजाभिषेको व्रतमपि शुभदं नैव याम्यायने स्यात् ।
नो वा बाल्यास्तवार्धे सुरगुरुसितयोर्नैव केतूदये स्यात् ।
न्यूने मासेऽधिके वा नहि च सुरगुरौ सिंहनक्रस्थिते वा ॥

अर्थ--देवता, तड़ाग आदि की प्रतिष्ठा, विवाह, अग्निहोत्र, गृहप्रवेश चूड़ाकरण, राजाभिषेक उपनयन ये कर्म याम्यायन, बृहस्पति शुक्र के अस्त बाल्य वार्धक, केतु का उदय, क्षयमास, अधिमास तथा सिंह मकरस्थ बृहस्पति इनमें न करना चाहिये ॥

पाकारम्भ चुल्हिकास्थापन—

गृहप्रवेशवारादौ पाकारम्भोऽपि शस्यते ।
तत्रैव रविवारेऽपि चुल्हिकास्थापनं शुभम् ॥

अर्थ--गृहप्रवेश में कहे हुए दिनादि में प्रथम पाकारम्भ करना शुभ है । तथा गृहप्रवेश मुहूर्त और रविवार में भी चुल्ही का स्थापन शुभ है ॥

मार्जनीवन्धन—

"श्रवणादीनि षड् भानि त्यक्त्वाऽर्कशनिमङ्गलान् ।
विरिक्तसङ्क्रमे वारे मार्जनीबन्धनं शुभम् ॥"

अर्थ--श्रवणादि ६ नक्षत्र रवि शनि मङ्गल वार रिक्ता तिथि सङ्क्रान्ति दिन उपलक्षण से मासान्त और मासादि इन सबों को छोड़ दूसरे दिन में बढ़नी (झाड़ू) वान्धना शुभ है ।

अथ कृषि-प्रकरण—

तत्र हल बीजवपन मुहूर्त—

"षष्ठीं चैवाष्टमीं रिक्तां त्यक्त्वार्कशनिमङ्गलान् ।
मूलद्वीशमघाक्षिप्रचरध्रुवमृदूडुषु ॥
मीनयुग्मालिगोकन्याधनुर्लग्ने हलक्रिया ।
वीजोप्तिश्च शुभैतेषु द्वीशश्रुत्यम्बुपान् विना ॥"

अर्थ--षष्ठी अष्टमी रिक्ता तिथि, रवि शनि मङ्गलवार इन सबों को छोड़ कर अन्य तिथि और दिन में, मूल विशाखा मघा क्षिप्र चर ध्रुव मृदु संज्ञक नक्षत्रों में, मिथुन वृश्चिक वृष कन्या धनु लग्न में, हल क्रिया (प्रथम हल जोतवाना) शुभ है । और विशाखा श्रवण शतभिषा इन नक्षत्रों को छोड़ कर उपरोक्त मुहूर्तों में वीजवपन शुभ है ॥

सस्यरोपण-छेदन—

बीजोप्तितिथिवारर्क्षलग्नेष्वेव शुभं स्मृतम् ।
रोपणं सर्वसस्यानां छेदनं प्रथमं तथा ॥

अर्थ—बीजोप्ति तिथिवारादि में सब प्रकार के धान्यका रोपण और छेदन शुभ है ॥

खल (खरिहान) स्थान—

पुरासन्ने प्रसन्नायां भूमौ कुर्यात् खलं शुभम् ।
तत्र स्थाप्यानि सस्यानि मर्दनार्थं शुभे दिने ॥

अर्थ—ग्राम के समीप में प्रसन्न भूमि में कणमर्दन करने के लिये खरिहान बनावे । और वहाँ मर्दन (दौनी) करने के लिये धान्य स्थापन करै ॥

अथ मेधि (मेह) स्थापन—

वटोदुम्बरनीपानां शाखोटबदरस्य च ।
शाल्मलेर्मुशलेनैव मेधिं कुर्याद् विचक्षणः ॥
कपित्थबिल्ववंशानां मेधिर्नैव शुभावहः ।
न पौषे न च रिक्तायां न कुजार्किदिने तथा ॥
मृदुक्षिप्रचरर्क्षेषु खाते द्रव्यं नियुज्य च ।
सम्पूज्य धान्यबद्धाग्रं मेधिं संस्थापयेद्बुधः ॥

अर्थ—बड़, गूलर, कदम्ब, साहोर, बैर, सेमर इनका (मेधी) मेह बनाना चाहिये, और कैथ, बेल बाँस का मेह शुभ नहीं होता है । तथा पौष, रिक्ता, मङ्गल शनि इनको छोड़ कर बाकी तिथि दिन में और मृदु क्षिप्र चर संज्ञक नक्षत्र में खात खन करके उसमें कुछ द्रव्य देकर पूजन करके मेधी के अग्र में धान्य बाँध कर स्थापन करै ॥

धान्यमर्दन—

भाग्येऽर्यम्णे श्रुतौ मूले ब्राह्ममैत्रमघासु च ।
पौष्णेन्द्रयोः शुभे वारे शुभं स्याद्धान्यमर्दनम् ॥

अर्थ--पूर्वफाल्गुनी, उत्तरफाल्गुनी श्रवण मूल रोहणी अनुराधा मघा रेवती ज्येष्ठा इन नक्षत्रों में शनि मङ्गल को छोड़ कर अन्य दिनों में धान्य मर्दन शुभ है ॥

वीजरक्षण—

"अजपादान्त्यमूलेन्दुवातहस्तमघासु च ।
विश्वब्राह्मे स्थिरे लग्ने बीजं स्थाप्यं शुभे दिने ॥"

अर्थ--पूर्वभाद्रपदा रेवती मूल मृगशिरा स्वाती हस्त मघा उत्तराषाढ़ रोहिणी इन नक्षत्रों में स्थिर लग्नमें शुभ दिन में धान्यादिक बीजधारण करना चाहिये ॥

गृहादौ धान्यादिस्थापनम्-धान्यवृद्धिश्च—

मिश्रोग्ररौद्रभुजगेन्द्रविभिन्नभेषु
कर्काजतौलिरहिते च तनौ शुभाहे ।
धान्यस्थितिः शुभकरी गदिता ध्रुवेज्य-
द्वीशेन्द्रदस्रचरभेषु च धान्यवृद्धिः ॥

अर्थ--मिश्र उग्र संज्ञक, आर्द्रा श्लेषा ज्येष्ठा इनसे भिन्न नक्षत्रों में, कर्क मेष तुला से भिन्न लग्नों में शुभ ग्रह के दिन में घर वा वखाड़ी में धान्य आदि रखना शुभ है। और ध्रुव संज्ञक पुष्य विशाखा ज्येष्ठा अश्विनी चरसंज्ञक इन नक्षत्रों में वृद्धि के लिये अन्न सवाया लगाना शुभ है ॥

अथ अर्घ (अन्नमूल्य) विचार—

समं मृदुक्षिप्रवसुश्रवोऽग्नि-मघात्रिपूर्वास्रपभं बृहत्स्यात् ।
ध्रुवद्विदैवादितिभं जघन्यं सार्पाम्बुपार्द्रानिलशाक्रयाम्यम् ॥

अर्थ--मृदु संज्ञक, क्षिप्र संज्ञक धनिष्ठा श्रवण कृत्तिका मघा तीनों पूर्वा मूल ये सम संज्ञक नक्षत्र हैं। और ध्रुव संज्ञक, विशाखा पुनर्वसु ये बृहत्संज्ञक हैं। तथा श्लेषा शतभिषा आर्द्रा स्वाती ज्येष्ठा भरणी ये जघन्य संज्ञक हैं ॥

जघन्येऽर्कस्य सङ्क्रान्तिस्तदान्नस्य महर्घता ।
बृहत्संज्ञे समर्घत्वं समत्वं समसंज्ञके ॥

अर्थ--जघन्य नक्षत्रों में रवि की सङ्क्रान्ति हो तो अन्न की महँगी (तेजी)-होती है। बृहत्संज्ञक नक्षत्र में सङ्क्रान्ति हो तो सस्ती (मन्दी) होती है; सम नक्षत्र में सङ्क्रान्ति हो तो उस महीने में अन्न का भाव समान रहता है ॥

सङ्क्रान्ति में पुण्यकाल—

सूर्यसङ्क्रान्तितः पूर्वं पश्चात् षोडश षोडश ।
नाडिकाः पुण्यदास्तत्र स्नानं दानं समाचरेत् ॥

अर्थ--सूर्य के सङ्क्रान्तिकाल से पूर्व और पश्चात् १६, १६, घड़ी पुण्यकाल होता है। उसमें स्नान दान करने से विशेष फल होता है।

विशेष—

रात्रिपूर्वार्धकेऽर्कस्य सङ्क्रान्तिर्यदि जायते ।
तदा पूर्वदिनस्यैव पराह्णे पुण्यनाडिकाः ॥
उत्तरार्धेऽग्रिमस्योक्ताः पूर्वाह्णे पुण्यनाडिकाः ।
निशीथे यदि सङ्क्रान्तिस्तदा पुण्यं दिनद्वयम् ॥

अर्थ--रात्रि के पूर्वार्ध में रवि सङ्क्रान्ति हो तो पूर्व दिनके

पराह्न में पुण्यकाल होता है। यदि रात्रि के उत्तरार्ध में सङ्क्रान्ति हो तो अग्रिम दिन के पूर्वभागमें पुण्यकाल होता है। यदि ठीक मध्यरात्रि में सङ्क्रान्ति हो तो पूर्व और पर दोनों दिन पुण्यकाल होता है॥

अथ क्रयविक्रय—

यमाहिशक्राग्निहुताशपूर्वा नेष्टाः क्रये विक्रयणे तु शस्ताः।
पौष्णाश्विचित्राशतविष्णुवाताः क्रयेहिताविक्रयणेनिषिद्धाः॥

अर्थ—भरणी श्लेषा विशाखा कृत्तिका तीनों पूर्वा क्रय (खरीद) करने में अशुभ और विक्रय (बेचने) में शुभ है। तथा रेवती अश्विनी चित्रा श्रवण स्वाती ये क्रय में शुभ और विक्रय में अशुभ हैं॥

अथ द्रव्यप्रयोग—

ऋणं ग्राह्यं न सङ्क्रान्तौ करे वृद्धौ कुजे रवौ।
न देयं ज्ञे ध्रुवे मिश्रे तीक्ष्णोग्रे विष्टिपातयोः॥

अर्थ—रवि कुजवार सङ्क्रान्ति दिन हस्त नक्षत्र वृद्धि योग इनमें ऋण न ग्रहण करै। बुधवार ध्रुव मिश्र तीक्ष्ण उग्र संज्ञक नक्षत्र और भद्रा, पातयोग इनमें ऋण न लगावे॥

अथ नवान्नभक्षण मुहूर्त—

वृश्चिकेऽर्के च पूर्वार्धे मृगकुम्भस्थिते रवौ।
सत्तिथौ शुक्लपक्षे च पञ्चम्यन्ते सितेतरे॥
मृदुक्षिप्रचरर्क्षेषु सत्तनौ सत्क्षणेषु च॥
हुत्वा वह्नौ विधानेन नवान्नं प्राशयेत्सुधीः॥

अर्थ—वृश्चिक के सूर्य में १५ अंश पर्यन्त तथा मकर कुम्भ के सूर्य (माघ फाल्गुन) में शुभ तिथि में शुक्ल पक्ष में तथा पञ्चमी पर्यन्त कृष्ण पक्ष में भी मृदु क्षिप्र चर संज्ञक नक्षत्रों में अग्नि में विधि पूर्वक हवन करके नवान्न भक्षण करना चाहिये ॥

निषेध—

तुलाचापद्विदैवार्कं चैत्र नन्दां त्रयोदशीम् ।
जन्मर्क्षं शयनं विष्णोः शनिशुक्रकुजान् विना ॥

अर्थ—तुला धनु विशाखा इनमें स्थित रवि, चैत्र मास, नन्दा त्रयोदशी तिथि, जन्मतारा हरिशयन शनि मङ्गल शुक्रवार इनको छोड़ कर नवान्नभक्षण शुभ है ॥

होमाहुति मुहूर्त—

सैकातिथिर्वाररयुता कृताप्ता शेषे गुणेऽभ्रे भुवि वह्निवासः ।
सौख्याय होमे शशियुग्मशेषे प्राणार्थनाशौ दिवि भूतले च ॥

अर्थ—शुक्लपक्ष की प्रतिपदासे तिथि संङ्ख्या गिनकर १ जोड़ दे फिर उसमें रव्यादिक वार सङ्ख्या जोड़कर ४ से भाग देने से ०, ३ शेष बचे तो पृथ्वी में अग्नि का वास रहता है उसमें होम करने से सुख होता है । और १, २, शेष बचे तो क्रमसे आकाश और पाताल में अग्निवास रहता है उसमें होम करने से प्राण और धन का नाश होता है ॥

अथ महारुद्रादौ शिववासफलम्—

तिथिं च द्विगुणीकृत्य बाणैः संयोजयेत्ततः ।
सप्तभिश्च हरेद्भागं शिववासं समुद्दिशेत् ॥
एकेन वासः कैलासे द्वितीये गौरिसन्निधौ ।

तृतीये वृषभारूढः सभायां च चतुष्टये ॥
पञ्चके भोजने चैव क्रीडायां षण्मिते तथा ॥
श्मशाने सप्तशेषे च शिववास इतीरितः ।
कैलासे लभते सौख्यं गौर्यां च सुखसम्पदः ॥
वृषभेऽभीष्टसिद्धिः स्यात् सभा सन्तापकारिणी ।
भोजने च भवेत् पीड़ा क्रीडायां कष्टमेव च ।
श्मशाने मरणं ज्ञेयं फलमेवं विचारयेत् ॥

स्पष्टार्थ—

शिववास शुभ तिथिचक्र—

तिथि—	२, ५, ६, ७, ९, १२, १३, १४,
कृष्णपक्ष तिथि—	१, ४, ५, ६, ८, ११, १२, ३०

अथ पशुपालन—

लग्ने शुभे चाष्टमशुद्धिसंयुते रक्षा पशूनां निजयोनिभे चरे ।
रिक्ताष्टमीदर्शकुजश्रवोध्रुवत्वाष्ट्रेषुयानं स्थितिवेशनं न सत् ॥

अर्थ—अष्टम शुद्धि सहित शुभ लग्न में अपने योनि नक्षत्र (विवाह प्रकरणोक्त) में रिक्ता अष्टमी अमावस्या मङ्गल श्रवण ध्रुव संज्ञक चित्रा इनको छोड़ कर बाकी तिथि नक्षत्रों में पशु की रक्षा (पालन) करना शुभ है ।

गजाश्वारोहणादि—

क्षिप्रान्त्यवस्विन्दुमरुज्जलेशादित्येष्वरिक्तारदिने प्रशस्तम् ।
स्याद्वाजिकृत्यं त्वथ हस्तिकार्यं कुर्यान्मृदुक्षिप्रचरेषु विद्वान् ॥

अर्थ—क्षिप्र संज्ञक रेवती धनिष्ठा मृगशिरा स्वाती पूर्वाषाढ़ पुनर्वसु नक्षत्रों में, रिक्ता मङ्गल को छोड़ कर बाकी तिथि दिन में घोड़ा के सम्बन्धी सब कार्य शुभ हैं । मृदु क्षिप्र चर संज्ञक नक्षत्रों में, हस्ति (हाथी) सम्बन्धी कार्य करे ॥

अथ वृक्षादिरोपण—

शुक्लपक्षे तिथौ शस्ते शुक्रज्ञेन्दुगुरौ दिने ।
तरूणां रोपणं शस्तं मृदुक्षिप्रध्रुवोडुभिः ॥

अर्थ—शुक्ल पक्ष में, शुभ तिथि में, शुक्र बुध सोम गुरुवार में, मृदु क्षिप्र ध्रुव संज्ञक नक्षत्रों में वृक्षादिरोपण शुभ है ।

कदलीरोपणे विशेषः—

श्रवणादीनि षड् भद्रां भाद्रंसूर्यकुजार्कजान् ।
म्यन्तश्यन्ततिथींस्त्यक्त्वा कदलीरोपणं शुभम् ॥

अर्थ—श्रवण आदि ६ नक्षत्र, भद्राकरण, भाद्र मास, रवि मङ्गल शनिवार, म्यन्त (मी अन्तवाली अर्थात् पञ्चमी सप्तमी अष्टमी नवमी दशमी) और श्यन्त (अर्थात् एकादशी, द्वादशी, त्रयोदशी, चतुर्दशी, पञ्चदशी) तिथियों को छोड़ कर कदली (केला) रोपना शुभ है ॥

अथ जन्मपत्र प्रकरण—

आवश्यक परिभाषा—१ घण्टा में अढ़ाई दण्ड (२।३०) और १ मिनिट में अढ़ाई पल होता है। इस हिसाब से घण्टा मिनिट रप

से दण्ड पल, और दण्ड पल से घण्टा मिनिट बना लेना चाहिये ।

जैसे—घण्टा को ५ से गुणा करके २ का भाग देने से दण्ड होता है, और मिनिट को ५ से गुणा करके २ का भाग देने से पल होता है ।

दण्ड पल पर से—घण्टा मिनिट बनाना—जैसे—दण्ड को २ से गुणा करके ५ का भाग देने से घण्टा, और पल को २ से गुणा कर ५ का भाग देनेसे मिनिट होता है ।

घण्टा मिनिट से इष्टदण्ड बनाने का प्रकार—दिन में १२ बजे से पूर्व घण्टा मिनिट पर से दण्डपल बना कर उसमें गत रात्र्यर्ध (पञ्चाङ्ग में लिखा रहता है) को घटा देने से इष्टकाल होता है ॥

(२) १२ बजे दिन के ऊपर १२ बजे रात्रि तक के घण्टा मिनिट पर से दण्ड पल बना करके दिनार्द्ध में जोड़ देने से इष्ट-दण्ड होता है ।

(३) रात्रि में १२ बजे से ऊपर के घण्टा मिनिट के दण्ड पल मिश्रमान में (दिनमान में रात्रिमान का आधा जोड़ने से मिश्रमान होता है उसमें) जोड़ने से इष्टकाल होता है ॥

उदाहरण—श्रावण शुक्ल ७ मी गुरुवार दिनमें ९ बज कर १४ मिनिट में किसी का जन्म हुआ तो—उपरोक्त विधि से, ९ घं, १४ मि. के दण्ड पल २३।३२ हुए । इनमें गत रात्र्यर्ध मान १३।३३ को घटाया तो शेष ९।३२ अर्थात् ९ घटी ३२ पल इष्ट-काल हुआ । इसी प्रकार और काल में भी जानना चाहिये ॥

इष्टकाल और लग्नसारिणी से लग्न जानने की विधि—

"इष्टार्कराश्यंशतले घटीपलं
स्वाभीष्टनाडीपलसंयुतं च तत् ।
यद्राशिभागस्य तले स्थितं भवेत्
तदेव लग्नं च कलानुपाततः ॥

अर्थ—जिस दिन लग्न जानना है उस दिन पञ्चाङ्ग में सूर्य; जिस राशि के जिस अंश में हो लग्नसारिणी में उसी राशि के उतने ही अंश के नीचे जो दण्ड पल विपल लिखा रहै उसमें अपने इष्टकाल के दण्ड पल विपल को जोड़ने से ६० से अधिक हो तो उसमें ६० घटा कर जो दण्ड पल हो वे लग्नसारिणी में जिस राशि के जितने अंश के नीचे मिले वही राशि उतने अंश का लग्न होता है ।

उदाहरण— श्रावण शुक्ल सप्तमी गुरुवार में इष्टकाल ९ घटी ३२ पल है। इस दिन पञ्चाङ्ग में कर्कराशि में सूर्य के भुक्तांश २१ हैं, तो लग्नसारिणी में कर्कराशि के २१ अंश के नीचे दं. २१, प. २१, वि० में इष्ट दण्ड ९ पल ३२ जोड़ने से ३०।५३।० हुए। यह लग्न सारिणी में कन्याराशि कोष्टक में १२ अंश के नीचे है, इसलिये कन्याराशि लग्न हुआ। इसको द्वादशराशि कुण्डली में प्रथम कोष्टक में रख कर सब राशि के अङ्क क्रम से लिखना चाहिये और जो ग्रह जिस राशि में हो उस राशि में ग्रह को लिखे। इस प्रकार इष्टकाल जान कर लग्नसारिणी से लग्न समझ कर जन्मकुण्डली लिखे। स्पष्ट लग्न और ग्रह बनाने का प्रकार आगे लिखेंगे ॥

०	श्रीः	०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४
०		२	२	३	३	३	३	३	३	३	३	४	४	४	४	४
७	रा. ०मे.	४	५६	४	११	१८	२६	३३	४१	४९	५७	६	१४	२३	३१	४०
२२		२६	४८	१	३२	१४	१६	३८	०	२६	५२	१८	४४	१०	३६	२
०		६	७	७	७	७	७	७	७	८	८	८	८	८	८	९
८	रा. १वृ.	५४	२	११	२०	२८	३७	४५	५४	४	१४	२४	३४	४४	५४	४
२६		५८	२४	५०	१६	४२	८	३४	०	८	१६	२४	३२	४०	४८	५६
०		११	११	१२	१२	१२	१२	१२	१२	१३	१३	१३	१३	१३	१४	१४
१०	रा. २मि.	४७	५७	७	१७	२७	३७	४७	१८	९	२०	३२	४४	५५	६	१७
८		४	१२	२०	२८	३६	४४	५२	०	२४	४८	१२	३६	०	२४	४८
०		१७	१७	१७	१७	१८	१८	१८	१८	१८	१९	१९	१९	१९	१९	२०
११	रा. ३क.	२०	३१	४३	५४	५	१७	२८	४०	५१	३	१४	२६	३७	४९	०
२४		१२	३६	०	२४	४८	१२	२६	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०
०		२३	२३	२३	२३	२३	२४	२४	२४	२४	२४	२४	२५	२५	२५	२५
११	रा. ४सिं.	४	१६	२७	३९	५०	२	१३	२५	३६	४७	५८	९	२०	३२	४३
३०		३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	१०	२०	३०	४०	५०	०	१०
०		२८	२८	२९	२९	२९	२९	२९	३०	३०	३०	३०	३०	३०	३१	३१
११	रा. ५कं.	४१	५३	४	१५	२६	३७	४८	०	११	२२	३३	४४	५५	७	१८
१०		५०	०	१०	२०	३०	४०	५०	०	१०	२०	३०	४०	५०	०	१०
०		३४	३४	३४	३४	३५	३५	३५	३५	३५	३५	३६	३६	३६	३६	३६
११	रा. ६तु.	१६	२८	२९	५०	१	१२	२३	३५	४६	५८	९	२१	३०	४४	५५
१०		५०	०	१०	२०	३०	४०	५०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०
०		३९	४०	४०	४०	४०	४०	४१	४१	४१	४१	४१	४२	४२	४२	४२
११	रा. ७वृ.	५९	११	२२	३४	४५	५७	८	२०	३१	४२	५४	५	१७	२८	३९
३०		३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	२४	४८	१२	३६	०	२४	४८
०		४५	४५	४६	४६	४६	४६	४६	४७	४७	४७	४७	४७	४७	४८	४८
११	रा. ८ध.	४२	५३	५	१६	२७	३९	५०	२	१२	२२	३२	४२	५०	२	१२
२४		१२	३६	०	२४	४८	१२	३६	०	८	१६	२४	३२	४०	४८	५६
०		५०	५१	५१	५१	५१	५१	५१	५२	५२	५२	५२	५२	५२	५२	५३
१०	रा. ९म.	५५	५	१५	२५	३५	४५	५५	६	१४	२२	३१	३९	४८	५६	५
८		४	१२	२०	२८	३६	४४	५२	०	२६	५२	१८	४४	१०	३६	२
०		५५	५५	५५	५५	५५	५६	५६	५६	५६	५६	५६	५६	५६	५७	५७
८	रा. १०कुं.	१९	२८	३६	४५	५३	२	१०	१९	२६	३३	४१	४८	५५	३	१०
२६		५८	२४	५०	१६	४२	८	३४	०	२२	४४	६	२८	५०	१२	३४
०		५९	५९	५९	५९	५९	५९	५९	०	०	०	०	०	०	०	०
७	रा. ११मी.	८	१५	२३	३०	३७	४५	५२	०	७	१४	२२	२९	३६	४४	५१
२२		२६	[illegible]	१०	[illegible]	[illegible]	[illegible]	[illegible]	०	[illegible]	[illegible]	[illegible]	[illegible]	[illegible]	१२	३४

०	श्री	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९
०		४	४	५	५	५	५	५	५	५	६	६	६	६	६	६
७	रा. ० मे.	४८	५६	५	१३	२२	३०	३९	४७	५५	४	१२	२१	२९	३८	४६
२२		२८	५४	२०	४६	१२	३८	४	३०	५६	२२	४८	१४	४०	६	३२
०		९	९	९	९	९	१०	१०	१०	१०	१०	१०	११	११	११	११
८	रा. १ वृ.	१५	२५	३५	४५	५५	५	१५	२६	३६	४६	५६	६	१६	२६	३६
२६		४	१२	२०	२८	३६	४४	५६	०	८	१६	२४	३२	४०	३८	५६
०		१४	१४	१४	१५	१५	१५	१५	१५	१६	१६	१६	१६	१६	१६	१७
१०	रा. २ मि.	२९	४०	५२	३	१४	२६	३७	४९	०	११	२३	३४	४६	५७	८
८		१२	३६	०	२४	४८	१२	३६	०	२४	४८	१२	३६	०	२४	४८
०		२०	२०	२०	२०	२०	२१	२१	२१	२१	२१	२२	२२	२२	२३	२३
११	रा. ३ क.	१२	२३	३५	४६	५८	९	२१	३२	४४	५५	७	१८	३०	४१	५३
२४		०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०
०		२५	२६	२६	२६	२६	२६	२७	२७	२७	२७	२७	२७	२८	२८	२८
११	रा. ४ सिं.	५४	५	१६	२७	३९	५०	१	१२	२२	३४	४६	५७	८	१९	३०
३०		२०	३०	४०	५०	०	१०	२०	३०	४०	५०	०	१०	२०	३९	४०
०		३१	३१	३१	३२	३२	३२	३२	३२	३२	३३	३३	३३	३३	३३	३४
११	रा. ५ कं.	२९	४०	५१	२	१४	२५	३६	४७	५८	९	२१	३२	४३	५४	५
१०		२०	३०	४०	५०	०	१०	२०	३०	४०	५०	०	१०	२०	३०	४०
०		३७	३७	३७	३७	३७	३८	३८	३८	३८	३८	३९	३९	३९	३९	३९
११	रा. ६ तु.	७	१८	३०	४१	५३	४	१६	३७	३९	५०	२	१३	२५	३६	१८
१०		०	३०	०	३०	७	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०
०		४२	४३	४३	४३	४३	४३	४३	४४	४४	४४	४४	४४	४५	४५	४५
११	रा. ७ वृ.	५१	२	१४	२५	३६	४८	५९	११	२२	३३	४५	५६	८	१९	३०
३०		१२	३६	०	२४	४८	१२	३६	०	२४	४८	१२	३६	०	२४	३८
०		४८	४८	४८	४८	४९	४९	४९	४९	४९	४९	५०	५०	५०	५०	५०
११	रा. ८ ध.	२३	३३	४३	५२	३	१३	२३	३४	४४	५४	४	१४	२४	३४	४४
२४		४	१२	२०	२८	३६	४४	५२	०	८	१६	२४	३२	४०	४८	५६
०		५३	५३	५३	५३	५३	५३	५४	५४	५४	५४	५४	५४	५४	५५	५५
१०	रा. ९ म.	१३	२१	३०	३८	४७	५५	४	१२	२०	२९	३७	४६	५४	३	११
८		२८	५४	२०	४६	१२	३८	४	३०	५६	२२	४८	१४	४०	६	३२
०		५७	५७	५७	५७	५७	५७	५८	५८	५८	५८	५८	५०	५८	५८	५९
८	रा. १० कुं.	१७	२५	३२	४०	४७	५४	२	९	१६	२४	३१	३८	४६	५३	१
२६		५६	१८	४०	२	२४	४६	८	३०	५२	१४	३६	५८	२०	४२	४
०		०	१	१	१	१	१	१	१	१	२	२	२	२	२	२
७	रा. ११ मी.	५८	६	१३	२१	२८	३५	४३	[illegible]	[illegible]	[illegible]	[illegible]	[illegible]	२७	३६	४२
२२		५६	१८	४०	२	२४	४६	८	३०	५२	१४	३६	५८	२०	४२	४

अथ जन्मपत्र लिखने की रीति—

आदित्यादिग्रहाः सर्वे नक्षत्राणि च राशयः ।
दीर्घमायुः प्रकुर्वन्तु यदीया जन्मपत्रिका ॥

शुभश्रीमन्नृपतिवीरविक्रमादित्यराजसमयात्सम्वत्सराः १९८२ शालिवाहनशकाब्दाः १८४७ मासोत्तमे वैशाखमासे शुक्लपक्षे तृतीया दं० १०।०, रोहिणी नक्षत्रे दण्डादि ३२।४४, शोभनयोगे दण्डादि ३३।५२ गरकरणे दण्डादि १०।० रविवासरे श्रीसूर्यभुक्त-मेषांशाः १३ एवं पञ्चाङ्गशुद्धौ दिनमानम् ३२।१६ रात्रिमानम् २७।४४ अहोरात्रमानम् ६० मिश्रमानम् ४३।५२ श्रीमन्मार्तण्डमण्ड-लार्धोदयादिष्टम् ४।५ एतस्मिन् समये वृषलग्ने अमुकगोत्रोद्भव-अमुक-शर्मणः स्वेष्टदेवताप्रसादादुभयकुलानन्दकरः श्रीमान् प्रथमः पुत्रो जातस्तदेतस्य शतपदचक्रानुसारेण रोहिणीनक्षत्रस्य तृतीयचरणे जन्म तेन इकारस्वरयुक्तवकाराद्यक्षरं नाम बोध्यम् । जातकोऽयं वृषराषिः वैश्यवर्णः सर्पयोनिः देवगणः अन्त्यनाडीकः एतेषां विवा-हादौ विचारः कर्तव्यः । अत्र भयातम् ३६।२० भभोगः ६४।५९
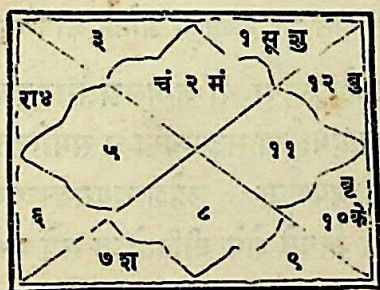
शुभं भूयात् ।

पुरुष स्त्री की कुण्डली जाननेकी रीति—

लग्नात्समे शनौ स्त्री च विषमे पुरुषः स्मृतः ।
न चेदेवं तदा ज्ञेया खिला सा जन्मपत्रिका ॥

अर्थ---लग्न से सम भवन में शनि हो तो स्त्री, विषम भवन में हो तो पुरुष समझना । ऐसा न हो तो कुण्डली में लग्न अशुद्ध है, ऐसा कहना ॥

अथवा—

लग्नाग्वर्ककुजाक्रान्तराशिसङ्ख्याश्च पिण्डयेत् ।
त्रिभिर्विभज्य शेषाङ्के समे स्त्री विषमे पुमान् ॥

अर्थ—लग्न, राहु सूर्य, मङ्गल ये जिन २ राशियों में हो सब की संङ्ख्या को जोड़ कर तीन का भाग देने से सम शेष बचे तो स्त्री, विषम बचे तो पुरुष समझना चाहिये ॥ दोनों प्रकार से एक मिले तब तो ठीक समझना नहीं तो शनि बलवान् हो तो प्रथम प्रकार से, और लग्नेश बलवान् हो तो द्वितीय प्रकार से आवे सो कहना ॥

जीवित मृत की कुण्डली जानने का नियम—

प्रश्नलग्नर्क्षसङ्ख्या या जन्मलग्नर्क्षसङ्ख्यया ।
जन्मलग्नाष्टमर्क्षस्य सङ्ख्यया च समन्विता ॥
साष्टमेशाश्रयर्क्षघ्ना लग्नेशाश्रयसङ्ख्यया ।
भाजिता विषमे शेषे जीवितोऽथ समे मृतः ॥

अर्थ—जन्मलग्न और जन्मलग्न से अष्टम भाव की राशि सङ्ख्या में प्रश्न लग्न की राशि सङ्ख्या जोड़ कर अष्टमेश जिस राशि

में बैठा हो उस राशि की सङ्ख्या से भाग देने से विषम शेष बचे तो जीवित की और सम शेष बचे तो मृत की कुण्डली समझना ॥

अथ अयनांशानयन—

एकद्विवेदोनशका नवघ्ना दिग्भिर्हृताश्चायनलिप्तिकाःस्युः।
लवीकृतोऽर्कस्त्रिगुणोनखाप्तस्तावन्मिताभिर्विकलाभिराढ्याः॥

अर्थ—इष्ट शाके में ४२१ घटा कर शेष को ९ से गुणा करके दस का भाग देने से लब्धि अयन कला होती है। कला शेष को साठ से गुणा कर फिर १० का भाग देने से विकला होती है। फिर तात्कालिक स्पष्ट सूर्य को अंशात्मक बना कर उसको ३ से गुणा करके बीस से भाग देने से लब्धि को पूर्वानीत अयन कलादि के विकला स्थान में जोड़ कर इष्टकालिक अयनकला होती है। उस में ६० का भाग देने से अयनांश होता है।

(१) उदाहरण—शाके १८५२ मार्गशीर्षशुक्ल त्रयोदशी में स्पष्ट सूर्य ८।१८।५।१५ यहां अयनांश बनाना है। उपरोक्त रीति से शाके १८५२ में ४२१ घटाया शेष १४३१ को ९ से गुणा किया १२८७९ इस में १० का भाग देने से लब्धि अयनकला १२८७ शेष ९ को ६० से गुणा कर १० का भाग देने से अयन विकला ५४। पूर्व लब्धि कला में ६० का भाग देकर वर्षारम्भ में अयनांश २१।२७।५४ हुआ। फिर स्पष्ट सूर्य के अंश २५८ को ३ से गुणा करने से ७७४ हुआ, इसमें २० का भाग देकर लब्ध विकला ३८ वर्षारम्भ कालिक अयनांश की विकला में जोड़ने से इष्टकालिक अयनांश २१।२८।३२ हुआ॥

अथ इष्टकाल में स्पष्टग्रहानयनप्रकार—

पङ्क्त्याः स्वेष्टो भवेदग्रे पङ्क्तिमिष्टाद्विशोधयेत् ।
तच्चालनं धनं ज्ञेयं व्यत्ययादृण्यत्ययं तथा ॥
धनर्णचालनेनैवं गतिर्निघ्नो खषड्हृता ।
लब्धांशाद्यं क्रमाद्योज्यं शोध्यमिष्टग्रहो भवेत् ॥
विलोमगमनादत्र राहौ कुर्याद्विपर्ययम् ।
तथा वक्रगतौ खेटे चालनस्य विधिस्त्वयम् ॥

अर्थ–पञ्चाङ्ग में जिस दिन जिस समय का ग्रह बना रहता है वह समय पङ्क्ति कहलाता है। अब जिस पङ्क्ति के समीप में अपना इष्टकाल पड़ता हो उस पङ्क्ति से यदि इष्टकाल आगे हो तो पङ्क्ति को इष्टकाल में घटावे तो शेष दिनादि धन चालन होता है। यदि पङ्क्ति से पीछे (पहिले) इष्टकाल हो तो इष्टकाल के दिनादिको पङ्क्ति के दिनादि में घटावे तो शेष दिनादि ऋण चालन होता है। धन चालन से ग्रह की गति को गोमूत्रिका गुणन विधि से गुणा करै फिर उस में ६० का भाग देने से अंशादि फलको पङ्क्ति स्थित ग्रह में जोड़ने से तात्कालिक स्पष्ट ग्रह होता है। इसी प्रकार ऋण चालन पर से अंशादि फल को पङ्क्ति के ग्रह में घटाने से तात्कालिक ग्रह होता है। राहु केतु और वक्रगति ग्रह में संस्कार उलटा होता है (अर्थात् धन चालन में घटाने से और ऋण चालन में जोड़ने से तात्कालिक होता है)।

(२) उदाहरण–जैसे पङ्क्ति फाल्गुन शुक्ल १० शुक्रवार मिश्रमान काल ४४।१४ में स्पष्ट सूर्य १०।१५।२४।१४ गति ६०।२१ है। और फा० शु० ८ बुध इष्ट काल ४१।१२ में स्पष्ट

सूर्य बनाना है तो पङ्क्ति के वारादि ६।४४।१४ में इष्ट वारादि ४।४१।१२ को घटाने से २।३।२ दिनादि ऋणचालन हुआ। इससे गोमूत्रिका विधि से सूर्यगति ६०।२१ को गुणा किया तो—

(६०।२१)×२ = १२०।४२

(६०।२१)×३ = १८०।६३

(६०।२१) ×२ = १२०।४२

गुणनफल का योग— १२०।२२२।१८३।४२

साठ ६० से भाग चढ़ाने से—२।३।४५।४२ ॐ=२।३।४६ अंशादि फल ऋण चालन होने के कारण पङ्क्तिस्थ स्पष्ट सूर्य १०।१५।२४।१४ में घटाने से १०।१३।२०।२८ स्पष्ट सूर्य हुआ। इसी प्रकार सब ग्रह का साधन करना॥

स्पष्टचन्द्रसाधनार्थं भयातभभोगानयन—

गतर्क्षनाडी खरसेषु शुद्धा सूर्योदयादिष्टघटीषु युक्ता।
भयातसंज्ञा भवतीह तस्य निजर्क्षनाडीसहितो भभोगः॥

अर्थ—इष्टकाल में नक्षत्र की गतघटी भयात कहलाती है और नक्षत्र की सम्पूर्ण भोग घटी भभोग कहलाती है। गत नक्षत्र की घटी जो पञ्चाङ्ग में लिखी हो उसको ६० में घटाकर शेष में सूर्योदय से इष्टकाल को जोड़ देने से भयात होता है और उसी शेष में वर्तमान नक्षत्र की घटी को (जो पञ्चाङ्ग में लिखी रहती है उसको) जोड़ने से भभोग होता है। विशेष—इष्टदिन में नक्षत्र की घटी और पल जो पञ्चाङ्ग में हो उससे यदि इष्टकाल अधिक

ॐ प्रतिविकला ३० से अधिक होने से विकला स्थान में १ अधिक बना दिया जाता है।

हो तो वही नक्षत्र गतर्क्ष होता है, वहाँ उसी नक्षत्र की घटी और पल को इष्टकाल के घटी पल में घटाने से भयात होता है। भभोग पूर्ववत्।

तात्कालिक चन्द्रमा का आनयन—

खषड्घ्नं भयातं भभोगोद्धृतं तत् खतर्कघ्नधिष्ण्येषु युक्तं द्विनिघ्नम्। नवाप्तं शशी भागपूर्वस्तु भुक्तिः खखाभ्राष्टवेदा भभोगेन भक्ताः॥

अर्थ—भयात को एकजातीय (पल बना) करके उसको ६० से गुणा करे, उसमें भभोग के (एकजातीय अर्थात्) घटी को ६० से गुणा कर पल जोड़ के) भाग देकर लब्धि को गत नक्षत्र की सङ्ख्या को ६० से गुणा करके जो हो उसमें जोड़ै, उसको २ से गुणा करके नौ (९) का भाग देने से अंशादिक स्पष्ट-चन्द्रमा होता है। और ४८००० में भभोग का भाग देने से चन्द्रमा की तात्कालिक स्पष्ट गति होती है॥

विशेष—४८००० को एक दफे ६० से गुणा करके उसमें भभोग को एक जातीय बनाकर के भाग देना चाहिये॥ घटी को ६० से गुणा करके उसमें पल जोड़ने से एक जातीय होता है॥

उ०—जैसे रोहिणी नक्षत्र में भयात १५।२० भभोग ६०।१५ भयात के १५।२० एक जातीय ९२० को ६० से गुणा किया तो ५५२०० हुए इसमें भभोग के एकजातीय ३६१५ से भाग दिया लब्धि १५।१६।११ इसमें गत नक्षत्र सङ्ख्या ३ को ६० से गुणाकर १८० जोड़ दिया तो १९५।१६।११ इसको २ से गुणा किया तो ३९०।३२।२२ इसमें ९ का भाग दिया तो अंशादि

४३।२३।३६ चन्द्रमा हुआ, अंश में ३० का भाग देकर राश्यादि स्पष्ट चन्द्रमा १।१३।२३।३६ हुआ ॥

पलभापर से चरखण्डानयन—

मेषादिगे सायनभागसूर्ये दिनार्धजाभा पलभाभवेत्सा ।
त्रिष्ठाहतास्युर्दशभिर्भुजङ्गैर्दिग्भिश्चरार्धानिगुणोद्धृतान्त्या ॥

अर्थ—सायनमेष की सङ्क्रान्ति जिस दिन हो उस दिन मध्याह्नकालिक द्वादशाङ्गुल (१२) शङ्कु की छाया पलभा कहलाती है। पलभा को तीन जगह रख कर प्रथम स्थान में १० से, द्वितीयस्थान में ८ से गुणा करै और तृतीय स्थान में १० से गुणा करके ३ का भाग देने से क्रम से मेषादि तीन राशियों की पलात्मक चरखण्डा होती है ॥

जैसे मिथिला की पलभा = ६, इससे उपरोक्त रीति के अनुसार चरखण्डा ६०।४८।२० ॥ तथा काशी की पलभा ५ अङ्गुल, ४५ व्यङ्गुगुल इस परसे चरखण्डा ५७।४६।१९ ॥

लङ्कोदय पर से स्वदेशोदय का ज्ञान—

लङ्कोदया विघटिका गजभानिगोऽङ्क-
दस्रास्त्रिपक्षदहनाः क्रमगोत्क्रमस्थाः ।
हीनान्विताश्चरदलैः क्रमगोत्क्रमस्थै-
र्मेषादितो घटत उत्क्रमतस्त्विमे स्युः ॥

अर्थ—२७८ पल मेष का। २९९ पल वृष का। ३२३ पल मिथुन का लङ्कोदयमान है। येही फिर उत्क्रम से कर्क, सिंह, कन्या का लङ्कोदय मान समझना। मेषादिक तीन राशि के लङ्कोदय मान में क्रम से चरखण्डा को घटाने से और कर्कादि तीन

राशि के लङ्कोदयमान में चरखण्डा को उत्क्रम से जोड़ने से स्व-देशोदयमान मेषादिक ६ राशियों का होता है । फिर वही उत्क्रम से तुलादिक ६ राशियों का मान होता है ॥

जैसे—

लङ्कोदय—चरखं. = मिथिलोदय	लं.उ.—चरखं. = काशी के उदय
मे. २७८—६० = २१८ मी.	मे. २७८—५७ = २२१ मी.
वृ. २९९—४८ = २५१ कुं.	वृ. २९९—४६ = २५३ कुं.
मि. ३२३—२० = ३०३ म.	मि. ३२३—१९ = ३०४ म.
क. ३२३ + २० = ३४३ ध.	क. ३२३ + १९ = ३४२ ध.
सिं. २९९ + ४८ = ३४७ वृ.	सिं. २९९ + ४६ = ३४५ वृ.
कं. २७८ + ६० = ३३८ तु.	क. २७८ + ५७ = ३३५ तु.

लग्नादि १२ भाव बनाने का सरल प्रकार—

सायनार्कस्य भुक्तांशा भोग्यांशाः स्वोदयैर्हताः ।
त्रिंशता विहृता लब्धपलानोष्टात् पलीकृतात् ॥
विशोध्यानि ततो भुक्तभोग्यराश्युदयासवः ।
शोध्यास्त्वेवं न यन्मानं शुद्धयेत् सोऽशुद्धसंज्ञकः ॥
शेषं त्रिंशद्गुणं भक्तमशुद्धभवनोदयैः ।
लब्धमंशाद्यशुद्धर्क्षे शोध्यं योज्यं च शुद्धभे ॥
व्ययनांशं च तत् कृत्वा फलार्थं लग्नमादृतम् ।

अर्थ—लग्न बनाने का दो प्रकार है—सायन सूर्य के भुक्तांश पर से भुक्त प्रकार तथा भोग्यांश पर से भोग्य प्रकार कहलाता है । यदि भुक्त प्रकार से लग्न बनाना हो तो सायन सूर्य के भुक्तांश

को, भोग्य प्रकार से बनाना हो तो सायन सूर्य के भोग्यांश को उसी राशि के उदय मान से गुणा करके उसमें ३० का भाग देने से लब्धि पल को इष्ट घड़ी को पलात्मक बना करके उसमें घटावे। फिर शेष इष्ट घटी के पल में भुक्त प्रकार में उत्क्रम से (सायन सूर्य की राशि से पीछे की) राशि के उदय मान घटावे तथा भोग्य प्रकार में क्रम से (सायन सूर्य के आगे की) राशि के स्वदेशोदय मान घटावे। इस प्रकार जिस राशि तक का उदय-मान घटे वह शुद्ध राशि तथा जिसका उदयमान न घटे वह अशुद्ध राशि कहलाती है। इस प्रकार घटाने पर इष्ट घटी पल का जो शेष बचे उसको ३० से गुणा करै फिर उसमें अशुद्ध राशि के उदय मान से भाग देकर लब्धि अंशादि फल को भुक्त प्रकार में अशुद्ध राशि सङ्ख्या में घटावे, भोग्य प्रकार में शुद्ध राशि सङ्ख्या में जोड़े, फिर उसमें अयनांश घटावे तो स्पष्ट लग्न होता है॥

कब भुक्त प्रकार से और कब भोग्य प्रकार से लग्न बनाना चाहिये उसका प्रकार—

दिवागतेष्टे रविभोग्यभागै-र्दिवावशेषे सरसार्कभुक्तैः।
निशागते षड्भयुतार्कभोग्यैर्निशावशेषे रविभुक्तभागैः॥

अर्थ—दिन गत इष्ट घटी हो तो भोग्य प्रकार से। दिन शेष (अर्थात् दिन मान में इष्ट घटी को घटा कर शेष) इष्ट घड़ी हो तो सायन सूर्य में ६ राशि जोड़ कर भुक्त प्रकार से। यदि रात्रि गत (अर्थात् सूर्योदय से इष्ट घटी में दिनमान घटा कर शेष, इष्ट घटी हो तो सूर्य में ६ राशि जोड़ कर भोग्य प्रकार से, यदि रात्रि शेष इष्ट घड़ी हो तो भुक्त प्रकार से लग्न बनाना चाहिये॥

फिर विशेष—

इष्टाधिकानि सूर्यस्य भुक्तभोग्यपलानि चेत् ।
तदेष्टात् त्रिंशता निघ्नात् सूर्याक्रान्तोदयैर्हृतात् ॥
लब्धांशै रहितो युक्तो रविरेव हि लग्नकम् ।

अर्थ–यदि सूर्य के भुक्तपल अथवा भोग्यपल इष्ट घटी के पल से अधिक हो तो, उक्त प्रकार से लग्न नहीं बन सकता है, इस लिये वहां इष्टकाल के पल को ३० से गुणा कर सायन सूर्य की राशि के उदय मान से भाग देकर लब्ध अंशादि को भुक्त प्रकार में सूर्य में घटाने से, और भोग्य प्रकार में सूर्य में जोड़ने से लग्न होता है।

लग्नं तूदयकालेस्याद् रविरेव हि सर्वदा ।
अस्तकाले सषड्भार्क तुल्यं ज्ञेयं विपश्चिता ॥

अर्थ–सूर्योदय काल में रवि के तुल्य ही लग्न होता है और सूर्यास्त समय में स्पष्ट सूर्य में ६ राशि जोड़ने से लग्न होता है ॥

दशमलग्न बनाने का प्रकार—

पूर्वं नतं स्याद्द्युदलाल्पमिष्टं दिनार्धमानात् प्रविशोध्यशेषम् ॥
इष्टे दिनार्धादधिके विशोध्यं दिनार्धमिष्टादपरं नतं स्यात् ॥
एवं स्वबुद्ध्या सुधिया विधेयं रात्र्यर्धतो रात्रिगतं नतं च ॥
लङ्कोदयैः पूर्वनतात् प्रसाध्यं भुक्तप्रकारेण पुरोदितेन ॥
भोग्यप्रकारेण परान्नताद्यल्लग्नंभवेत्तद्दशमाभिधानम् ॥
रात्रौ प्रसाध्यं च सषड्भसूर्यात्तत् षड्भयुक्तं च चतुर्थलग्नम् ॥
ज्ञेयं दिवा नताभावे रविरेव खलग्नकम् ।
एवं रात्रिनताभावे सषड्भरविणासमम् ॥

अर्थ—दिनार्ध से अल्प इष्टकाल हो तो उसको दिनार्ध में घटाने से दिवापूर्वनत होता है। और दिन का इष्टकाल दिनार्ध से अधिक हो तो उसमें दिनार्ध को घटा कर शेष दिवापश्चिमनत होता है। इसी प्रकार रात्रिगत इष्टघटी रात्र्यर्ध से अल्प हो तो दोनों का अन्तर रात्रि पूर्वनत, अधिक हो तो रात्रि पश्चिमनत होता है। अब दशम भाव साधन कहते हैं-जैसे पूर्वइष्टकाल पर से लग्न साधन का प्रकार कहा गया है उसी प्रकार पूर्वनतकाल को इष्टकाल मान कर भुक्त प्रकार से, और पश्चिमनत हो तो भोग्य प्रकार से, तथा लङ्कोदय राशिमान ग्रहण करके लग्न बनाने से दशम लग्न होता है! रात्रिगतनतकाल हो तो सूर्य में ६ राशि जोड़ कर उक्त प्रकार से दशम लग्न होता है। तथा दशम भाव में ६ राशि जोड़ने से चतुर्थ लग्न होता है॥ यदि दिवानत का अभाव हो तो सूर्य ही दशम लग्न होता है। और रात्रि में नत का अभाव हो तो सषड्भसूर्य के तुल्य दशम लग्न होता है॥

लग्नं सषड्भमस्तर्क्षं तथा लग्नोनतुर्यतः।
षष्ठांशयुक् तनुः सन्धिरग्रे षष्ठांशयोजनात् ॥
त्रयः ससन्धयो भावाः ज्ञेया बुद्धिमता ततः।
त्रिद्विभावौ क्रमाद्युक्तौ द्वाभ्यां वेदैः सुतद्विषौ ॥
लग्नादिभावाःषड षड्भयुक्ताः सप्तमकादयः।
त्रिद्व्येकसन्धयस्त्वेकत्रिपञ्चभयुताः क्रमात् ॥
सन्धयस्स्युश्चतुर्थाद्याः सषड्भाः षडमी परे।
खेटे भावसमे पूर्णं फलं सन्धिसमे तु खम् ॥

अर्थ—लग्न में ६ राशि जोड़ने से सप्तमभाव होता है।

तथा लग्न को चतुर्थ भाव में घटा कर शेष के षष्ठांश को लग्न में जोड़ने से लग्न की सन्धि होती है फिर उसमें षष्ठांश जोड़ने से द्वितीयभाव, द्वितीयभाव में षष्ठांश जोड़ने से द्वितीय भाव की सन्धि, उसमें फिर षष्ठांश जोड़ने से तृतीयभाव, उसमें फिर षष्ठांश जोड़ने से तृतीयभाव की सन्धि होती है। तथा तृतीय-भाव में २ राशि जोड़ने से पञ्चमभाव, द्वितीयभाव में ४ राशि जोड़ने से षष्ठ भाव होता है। इस प्रकार लग्नादि ६ भावों में पृथक् ६ राशि जोड़ने से क्रम से सप्तम आदि ६ भाव होते हैं। और तृतीय की सन्धि में १ राशि, द्वितीय की सन्धि में ३ राशि, प्रथमभाव की सन्धि में ५ राशि जोड़ने से क्रम से चतुर्थ पञ्चम, षष्ठभावों की सन्धि होती है। फिर उन सन्धियो में पृथक् पृथक् ६ राशि जोड़ने से सप्तम आदि की सन्धि होती है। इस प्रकार सन्धि सहित १२ भावों का साधन करना चाहिये। भाव के तुल्य ग्रह हो तो भाव का पूर्ण फल होता है तथा सन्धि के तुल्य ग्रह हो तो भाव फल शून्य होता है॥

लग्नादि भावानयन का उदाहरण—

शाके १८२१ चैत्र शुक्ल नवमी दं. २४। ३० पूर्वाषाढ नक्षत्र दं० ९।५६ श्री सूर्योदयादिष्टम् घट्यादि ४४। ३५ दिनमानम् ३०।१४ मिश्रमानम् ४५।७ भयातम् ३४।३९ भभोगः ५७।२३ अयनांशाः २१।०।५१ स्पष्ट सूर्यः ११।१२।२२।१९ रात्रौ पूर्वनतं घट्यादि ०।३२।

यहां लग्न साधन करना है। इष्ट घटी ४४।३५ को ६० में घटाकर भुक्तरीति से लग्न बनाने में सुभीता होगा, इसलिये इष्ट घटी को ६० में घटाने से रात्रि शेष रूप इष्ट घटी १५।२५ सायन

सूर्य ०।३।२३।१० इसके भुक्तांश ३।२३।१० को मिथिला के मेषोदय २१८ से गुणा करने से ७३८।१०।२० इसमें ३० का भाग देकर लब्ध पलादि २४।३६।२१ को इष्ट घटी के पल ९२५ में घटाने से शेष ९००।२३।३९ में गत मीन, कुम्भ, मकर के उदयमान घटा कर शेष १२८।२३।३९ को ३० से गुणा कर ३८५१।४९।३० इसमें अशुद्ध (धनु) राशि का मिथिलोदय ३४३ से भाग देकर लब्धि अंशादि ११।१३।४७ को अशुद्ध राशि सङ्ख्या ९ में घटाने से ८।१८।४६।१३ इसमें अयनांश घटाने से ७।२७।४५।२२ यह प्रथम लग्न हुआ। इसी में ६ राशि जोड़ने से सप्तम भाव १।२७।४५।२२ हुआ ॥

दशमलग्नोदाहरण—

दशम लग्नानयन में नतघटी को इष्टकाल मानकर और लङ्कोदय से पूर्वोक्त क्रिया होती है। यहां रात्रि का पूर्व नत ०।३२ है, इसलिये सायन सूर्य में ६ राशि जोड़ने से ६।३।२३।१० इसके भुक्तांश ३।२३।१० को तुला के लङ्कोदय २७८ से गुणाकर ९४१।२०।२० इसमें ३० का भाग देने से लब्धि पलादि ३१।२२।४१ को नतपल ३२ में घटा कर शेष ०।३७।१९ इसमें गतराशि (कन्या) का उदय नहीं घटता है, इसलिये शेष ०।३७।१९ को ३० से गुणा कर १८।३९।३० में कन्या का लङ्कोदय २७८ का भाग देने से अंशादि ०।४।२ को अशुद्ध राशि ६ में घटाने से ५।२९।५५।५८ इसमें अयनांश घटाने से दशम लग्न ५।८।५५।७ इसी में ६ राशि जोड़ने से चतुर्थ भाव ११।८।५५।७ हुआ। चतुर्थ भाव में लग्न को घटाकर शेष राश्यादि ३।११।९।४५ का षष्ठांश ०।१६ ५१।३७।३० इसको लग्न में जोड़ने से लग्न की सन्धि हुई,

फिर इसी षष्ठांश को जोड़ने से द्वितीयभावादि होता है । जैसे-

७	२७	४५	२२		= लग्न ।
०	१६	५१	३७	३०	= षष्ठांश ।
८	१४	३६	५९	३०	= लग्न सन्धि ।
९	१	२८	३७	०	= द्वितीय भाव ।
९	१८	२०	१४	३०	= द्वितीय सन्धि ।
१०	५	११	५२	०	= तृतीय भाव ।
१०	२२	३	२९	३०	= तृतीय सन्धि ।

अब तृतीय भाव में २ राशि जोड़ने से पञ्चम भाव = ०।५। ११।५२।० तथा द्वितीय भाव में ४ राशि जोड़ने से षष्ठ भाव = १ । १ । २८ ।३७ । ० । तथा तृतीय सन्धि में १ राशि जोड़ने से चतुर्थ सन्धि ११ । २२ । ३ । २९ । ३० और द्वितीय सन्धि में ३ राशि जोड़ने से ० । १८ । २० । १४ । ३० यह पञ्चम की सन्धि हुई । तथा लग्न की सन्धि में ५ राशि जोड़ने से षष्ठ भाव की सन्धि= १ । १४ । ३६ । ५९ । ३० इस प्रकार ससन्धि लग्नादि ६ भाव हुए । इन्हीं में ६ राशि जोड़ने से ससन्धि सप्तमादि भाव होते हैं ॥

भावोपरिग्रहदृष्टिविचार—

त्र्यांशं त्रिकोणं चतुरस्त्रमस्तं पश्यन्ति खेटाश्चरणाभिवृद्ध्या ।
मन्दो गुरुर्भूमिसुतः परे च क्रमेण सम्पूर्णदृशो भवन्ति ॥

अर्थ—ग्रह अपने स्थान से ३, १० स्थान को १ चरण से, ५, ९, को २ चरण से, ४, ८, को ३ चरण से, ७ को ४ से चणर

देखता है विशेष—शनि ३, १० को, बृहस्पति ९।५ को, मङ्गल ४, ८ को और बाकी ग्रह ७ को सम्पूर्ण दृष्टि से देखते हैं ॥

ग्रहों का निसर्ग मैत्री चक्र—

इसी ग्रन्थ में लिखित—ग्रह मैत्री के अनुसार

ग्रह	र॰	चं॰	मं॰	बु॰	गु॰	शु॰	श॰
मित्र	चं॰ मं॰ गु॰	र॰ बु॰	र॰ चं॰ गु॰	र॰ शु॰	र॰ चं॰ मं॰	बु॰ श॰	बु॰ शु॰
सम	बु॰	मं॰ गु॰ शु॰ श॰	शु॰ श॰	मं॰ गु॰ श॰	श॰	गु॰ मं॰	गु॰
शत्रु	शु॰ श॰	०	बु॰	चं॰	बु॰ शु॰	र॰ चं॰	र॰ चं॰ मं॰

अथ तात्कालिक मैत्री ज्ञान—

अन्योन्यस्य धनव्ययायसहजव्यापारबन्धुस्थिता—
स्तत्काले सुहृदः स्वतुङ्गभवनेऽप्येकेऽरयस्त्वन्यथा ।
द्व्येकानुक्तभपान् सुहृत्समरिपून् सञ्चिन्त्यनैसर्गिकान्-
तत्काले पुनरेव तानधिसुहृन्मित्रादिभिः कल्पयेत् ॥

अर्थ—अपने स्थान से परस्पर २, १२ और ३, ११ तथा ४, १० में स्थित ग्रह तात्कालिक मित्र होता है। अपने उच्चराशि में स्थित ग्रह भी मित्र होता है। शेषस्थान में स्थित ग्रह शत्रु होता है। इस प्रकार तात्कालिक तथा नैसर्गिक मित्र शत्रु का विचार करके फिर उसको अधिमित्र आदि पञ्चधा मैत्री विचार करै ॥

यथा—

तत्कालमित्रं च निसर्गमित्रं सदाधिमित्रं कथयन्ति सन्तः ।
मित्रंसमो मित्रमिति ब्रुवन्ति मित्रं च शत्रुश्च समं प्रवीणाः ॥
समश्च शत्रुर्भवतीह शत्रुःशत्रुश्च शत्रुर्ह्यधिशत्रुसंज्ञः ।
विचार्यमेवं गणितागमज्ञैस्तत्कालचक्राच्च निसर्गचक्रात् ॥

अर्थ—तात्काल में, और निसर्गचक्र में दोनों जगह मित्र होने से अधिमित्र, तथा एक स्थान में मित्र एक स्थान में सम होने से मित्र, और एक जगह मित्र एक जगह शत्रु होने से सम होता है । एवं सम और सम मिल करके सम ही रहता है । तथा शत्रु और सम होने से शत्रु और दोनों जगह शत्रु होने से ग्रह अधि-शत्रु होता है ।

ग्रहोंका उच्चनीचस्थान—

मेषो दशांशैः सूर्य्यस्य चन्द्रस्योच्चं वृषस्त्रिभिः ।
कुजस्याष्टाक्षिभिर्नक्रस्तिथ्यंशैर्ज्ञस्य कन्यका ॥
गुरोः पञ्चांशकैः कर्को भृगोर्मीनो नगाक्षिभिः ।
शनेस्तुला नखांशैश्च राहोश्च मिथुनं त्रिभिः ॥
केतोश्च वृश्चिकोऽष्टांशैः परमोच्चं स्मृतं बुधैः ।
उच्चात् सप्तमभं नीचमुक्तांशैरेव कीर्तितम् ॥

अर्थ—मेष में १० अंश से सूर्यका उच्च, ३ अंश से वृष में चन्द्र का, २८ अंश से मकर मङ्गलका, १५ अंश से कन्या का, बुध का, ५ अंश से कर्क बृहस्पति का, २७ अंश से मीन शुक्रका, २० अंश से तुला शनैश्चर का, ३ अंश से मिथुन राहु का, आठ

अंश से वृश्चिक केतु का उच्च होता है। उच्च राशि से ७ सप्तम राशि उतने ही अंश से नीच होती है ॥

अथ ग्रहों का षड्वर्ग—

गृहं होरा दृकाणश्च त्रिंशांशो नवमांशकः ।
द्वादशांशश्च खेटानां षड्वर्गाः परिकीर्तिताः ॥

अर्थ—१ गृह (राशि), २ होरा, ३ द्रेष्काण, ४ त्रिंशांश, ५ नवमांश, ६ द्वादशांश ये ६ ग्रहों के षड्वर्ग कहलाते हैं।

उसमें प्रथम १ गृह जिस राशि का जो स्वामी है वह राशि उस ग्रहका गृह कहलाता है (इसी ग्रन्थ में देखो) ॥

अथ होरा—

समगृहमध्ये शशिरविहोरा ।
विषममध्ये रविशशिनोः सा ॥

अर्थ-प्रत्येक राशि में दो होरा होता है। समराशि में १५ अंश तक चन्द्रमाका, बाद सूर्य का होरा होता है। विषमराशि में प्रथम रवि का द्वितीय चन्द्रमा का होरा होता है ॥

त्रिंशांश और द्रेष्काण—

शुक्रज्ञजीवशनिभूतनयस्य बाण-
शैलाष्टपञ्चविशिखाः समराशिमध्ये ।
त्रिंशांशको विषमभे विपरीतमस्माद्-
द्रेष्काणकाः प्रथमपञ्चनवाधिपानाम् ॥

अर्थ—समराशि में ५ अंश तक शुक्रका, ७ अंश बुधका, उसके बाद ८ अंश गुरुका, उसके बाद ५ अंश शनिका, उसके बाद ५

अंश मङ्गलका त्रिंशांश होता है। * विषम राशि में उत्क्रम से (अर्थात् प्रथम ५ अंश मङ्गलका, उसके बाद ५ अंश शनिका, उसके बाद ८ अंश गुरुका इत्यादि) समझना ॥ १० अंश का १ द्रेष्काण होता है—जिस राशि में द्रेष्काण विचार करना हो प्रथम द्रेष्काण उसी राशि का, दूसरा उस राशि से पञ्चमेश का, तीसरा उस राशि से नवमेश का द्रेष्काण होता है ॥

नवमांश—

नवमांशा मेषसिंहचापे मेषादयः क्रमात् ।
ज्ञेया गोमृगकन्यासु क्रमात्स्युर्मकरादयः ॥
तुलामिथुनकुम्भेषु स्युः क्रमेण तुलादयः ।
अलिकर्कटमीनेषु कर्कटाद्याः प्रकीर्तिताः ॥

अर्थ—मेष सिंह धनु में मेषादि, वृष कन्या मकर में मकरादि, तुला मिथुन कुम्भ में तुलादि, और कर्क वृश्चिक मीन में कर्कादि नवमांश होता है ॥

द्वादशांश—

द्वादशांशाः स्वभादेवं षड्वर्गाः कथिता इमे ।
स्वोच्चमित्रशुभैः श्रेष्ठा नीचारिक्रूरतोऽशुभाः ॥

अर्थ—जिस राशि में द्वादशांश विचार करना हो उसी राशि के क्रम से द्वादशांश होता है। इस प्रकार षड्वर्ग विचार करके यदि स्व राशि, अपनी ऊच्च राशि, अपने मित्र की राशि वा शुभ ग्रह का षड्वर्ग हो तो शुभ और नीच, शत्रु, पाप गह का हो तो अशुभ फल कहना ॥

---

* वर्षप्रवेश में प्रत्येक ग्रह का ६, ६ अंश त्रिंशांश होता है।

वर्गोत्तम नवांश—

भानां स्वस्वनवांशो यः स वर्गोत्तमसंज्ञकः ।

अर्थ—राशियों का अपना अपना नवांश वर्गोत्तम कहलाता है ।

पापग्रह—

क्षीणेन्द्वर्कयमाराः स्युः पापास्तत्संयुतो बुधः ॥

अर्थ—क्षीणचन्द्र, रवि, शनि, मंगल ये पापग्रह हैं । पापग्रह से युक्त बुध भी पापग्रह हो जाता है । शेष शुभग्रह हैं ॥

वर्षप्रवेशोपयोगी हद्दाचक्र—

मे.	वृ.	मि.	क.	सिं.	कं.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.
गु ६	शु ८	बु ६	मं ७	गु ६	बु ७	श ६	मं ७	गु १२	बु ७	शु ७	शु १२
शु ६	बु ६	शु ६	शु ६	शु ५	शु १०	बु ८	शु ४	शु ५	गु ७	बु ६	गु ४
बु ८	गु ८	गु ५	बु ६	श ७	गु ४	गु ७	बु ८	बु ४	शु ८	गु ७	बु ३
मं ५	श ५	मं ७	गु ७	बु ६	मं ७	शु ७	गु ५	मं. ५	श ४	मं ५	मं ९
श ५	मं ३	श ६	श ४	मं ६	श २	मं २	श ६	श ४	मं ४	श ५	श २

वर्षप्रवेश बनाने की विधि—

"गताः समाः पादयुताः प्रकृतिघ्नसमागणात् ।
खवेदाप्तघटीयुक्ता जन्मवारादिसंयुताः ॥
वर्षप्रवेशे वारादि सष्टतष्टेऽत्र निर्दिशेत् ।"

अर्थ—गतवर्ष संख्या में अपना चतुर्थांश जोड़े, उसमें फिर

गतवर्ष संख्या को २१ से गुणा करके ४० से भाग देने से लब्धि घटी आदि को जोड़ कर जो हो उसमें जन्मकालिक वारादि इष्ट घटी जोड़े, उसको सात से तष्टित करने से शेष वारादिक वर्ष प्रवेश काल होता है ।

उदाहरण—गत वर्ष ३१ इस में इसी का चतुर्थांश दिनादि ७।४५ जोड़ने से ३८।४५ इसमें गताब्द ३१ को २१ से गुणा किया तो ६५१ इसमें ४० का भाग देकर लब्धि घटी, पल १६ । १६ जोड़ने से ३९ । १ । १६ दिनादि में जन्मकालिक दिनादि इष्ट घड़ी १।४४।३५ जोड़ने से दिनादि वर्षप्रवेश कालिक दिनादि इष्ट ४०।४५।५१ दिन में ७ का भाग देकर दिनादि वर्षेष्ट ५।४५। ५१ हुआ अर्थात् गुरुवार में ४५ घड़ी ५१ पल पर ३२ वाँ वर्ष-प्रवेश होगा । उस समय में पूर्वोक्त विधि से स्पष्ट ग्रह और भावों का साधन करना ।

प्रवेशकालिक तिथि ज्ञान—

"शिवघ्नोऽब्दः स्वखाद्रीन्दुलवाढ्यः खाग्निशेषितः ।
जन्मतिथ्यन्वितस्तत्र तिथावब्दप्रवेशनम् ।।

अर्थ—गतवर्ष को ११ से गुणा करके उसमें १७० का भाग देकर लब्धि को उसीमें जोड़ फिर शुक्लपक्षादि गणना करके जन्मकालिक तिथि उसमें जोड़कर ३० का भाग देने से शेष वर्ष-प्रवेशकालिक तिथि होती है । तिथ्यानयन में मध्यममान होने के कारण कभी कभी एक तिथि का अन्तर भी होता है । जिस समय में स्पष्ट सूर्य जन्मकालिक स्पष्ट सूर्य के बराबर हो वह स्पष्ट वर्ष-प्रवेश काल समझना ।

उदाहरण—गत वर्ष ३१ को ११ से गुणाकर, गुणन फल ३४१ इसमें १७० का भाग देकर लब्धि २ उसी ३४१ में जोड़कर ३४३ इसमें जन्मतिथि २५ (कृष्णपक्ष दशमी) जोड़कर ३६८ इसमें ३० का भाग देकर शेष ८ शुक्लपक्ष को अष्टमी हुई। अर्थात् शुक्लपक्ष की अष्टमी में वर्ष प्रवेश होगा। तिथि में कभी १ दिन का अन्तर भी हो जाता है। इस लिये उपरोक्त विधि से जो दिन आवे उस दिन में निश्चय जन्मकालिक सूर्यांश तुल्य सूर्य के अंश होते हैं। इसलिये वर्ष प्रवेश में आगत दिन को प्रमाणित समझना ॥

अब वर्ष प्रवेश कालिक स्पष्ट ग्रह, तन्वादि द्वादश भाव पूर्वोक्त प्रकार से साधन करै ॥

वर्षप्रवेश में ग्रह दृष्टिस्थान –

तृतीयैकादशे दृष्टिः शुभा स्यान्नवपञ्चमे।
चतुर्थदशमे नेष्टा सप्तमैकगृहे तथा ॥

अर्थ—परस्पर ३, ११ और ५, ९ में शुभ दृष्टि होती है। ४, १० तथा १, ७ में अशुभ दृष्टि होती है। बाकी स्थानों को ग्रह नहीं देखता।

वर्षप्रवेश में मित्र शत्रु—

मित्रं त्रिकोणत्रिभवस्थितश्चेद्द्व्ययषष्टरिष्फेषुसमोग्रहःस्यात्।
केन्द्रेषु शत्रुः कथितो मुनीन्द्रैर्वर्षादिवेशे फलनिर्णयाय ॥

अर्थ—अपने स्थान से त्रिकोण ९, ५, ३, ११ वे स्थान में स्थित ग्रह मित्र और २, ६, ८, १२ वें स्थान में स्थित सम तथा केन्द्र १, ४, ७, १० में स्थित ग्रह शत्रु कहलाते हैं।

मुथहानयन—

गतवर्षगणः सैको हृतो द्वादशभिस्तथा ।
शेषराशौ बुधैर्ज्ञेया मुथहा जन्मलग्नतः ॥

अर्थ—गत वर्ष में एक जोड़ कर १२ से भाग देने से जो शेष बचे जन्म से उतनी संख्यक राशि में मुथहा होता है ।

उ०—गत वर्ष ३१ एक जोड़ कर ३२ इसमें १२ का भाग देने से शेष ८ जन्म लग्न वृश्चिक से अष्टम मिथुन में मुथहा हुआ ॥

अथ वर्षेशाधिकारी—

जन्मलग्नपतिरब्दलग्नपो मुन्थहाधिप इतस्त्रिराशिपः ।
सूर्यराशिपतिरह्निचन्द्रमाधीश्वरो निशिविमृश्यपञ्चकम् ॥
वली य एषां तनुमीक्षमाणः स वर्षपो लग्नमनीक्षमाणः ।
नैवाब्दपोदृष्टय्यतिरेकतःस्याद्बलस्य साम्ये विदुरेवमाद्याः ॥

अर्थ—१ जन्म लग्नेश, २ वर्ष लग्नेश, ३ मुंथहेश, ४ त्रिराशीश तथा दिन में वर्षप्रवेश हो तो सूर्य जिस राशि में हो उसका स्वामी ५ । यदि रात्रि में वर्षप्रवेश हो तो चन्द्रराशीश ५, इन पांचों का बल विचार करके जो सबसे बली हो और लग्न को देखता हो वह वर्षेश होता है । यदि लग्न को न देखता हो वह वर्षेश नहीं होता है । दो ग्रहों का बल यदि बराबर हो तो लग्न पर जिसकी दृष्टि विशेष हो वही वर्षेश होता है ।

त्रिराशीश—

त्रिराशिपाः सूर्यसितार्किशुक्रा दिने निशीज्येन्दुबुधक्ष्माजाः

मेषाच्चतुर्णां हरिभाद्विलोमं नित्यं परेष्वार्किकुजेज्यचन्द्राः ।

अर्थ-दिन में वर्ष प्रवेश हो तो मेषादिक चार राशियों में क्रम से सूर्य, शुक्र, शनि, शुक्र और रात्रिमें गुरु, चन्द्र, बुध, मंगल त्रिराशिपति होते हैं । सिंहादि चार राशियों में इसका उल्टा (अर्थात् दिन वाले रात्रि में, रात्रिवाले दिन में) समझना । तथा धन, मकर, कुम्भ मीन इन चार राशियों में दिन तथा रात्रि सर्वदा क्रम से शनि, मंगल, गुरु, चन्द्रमा त्रिराशीश होते हैं ॥

इष्टोच्चबलानयन--

स्वनीचोनः खगः षड्भाधिकश्चेच्चक्रतस्त्यजेत् ।
तदंशनवमो भागो ग्रहस्योच्चबलं स्मृतम् ॥

अर्थ-अपने नीच राशि अंश को ग्रह के राश्यादि में घटावै, शेष यदि ६ राशि से अधिक हो तो फिर उसको १२ में घटा कर अंश बनावै, उसमें ९ का भाग देने से लब्धि उच्चबल होता है ।

उदाहरण---राश्यादि स्पष्ट सूर्य १० । १५ । २४ । १४ में सूर्य के नीच राशि अंश ६ । १० को घटाने से शेष ४ । ५ । २४ । १४ यह ६ राशि से अल्प है इसलिये इसके अंश १२५ । २४ । १४ में ९ का भाग देने से लब्धि १३ । ५६ उच्च बल हुआ । इसी प्रकार सब ग्रहका उच्च बल बनाना ॥

पञ्चवर्गीबलम्

त्रिंशत्स्वभे विंशतिरात्मतुङ्गे हद्देऽक्षचन्द्रा दशकं दृक्काणे ।
नवांशके पञ्चलवाः प्रदिष्टा विंशोपका वेदलवैः प्रकल्प्या ॥

स्वस्वाधिकारोक्तवलं सुहृद्भे पादोनमर्धं समभेऽरिभेंऽघ्रिः ।
एवं समानीय वलं तदैक्ये वेदोद्धृते हीनवलः शरोनः ॥
पञ्चाल्पो हीनवीर्यः स्यादधिको मध्य उच्यते ।
दशाधिको वली प्रोक्तः पञ्चवर्गीवलादिके ॥

अर्थ—स्वराशि में ३०, उच्च में २०, स्वहद्दा में १५, स्वद्रेष्काण में १०, स्वनवांश में ५ ग्रहों का वल होता है । पांचों वल के योग का चतुर्थांश विंशोपक कहलाता है । अपने अपने अधिकार (गृहादि) में जो वल कहा गया है उसका चतुर्थांशोन मित्र की राशि में, समकी राशि में आधा, शत्रु की राशि में चतुर्थांश, वल होता है । इस प्रकार गृहादि पञ्चवर्गीवल के योग को ४ से भाग देने से ५ से अल्प हो तो ग्रह हीनवल होता है । ५ से अधिक १० के भीतर हो तो मध्यवली, १० से अधिक हो तो वली होता है ।

वर्षपत्र लिखने की रीति—

आदित्यादिग्रहाः सर्वे नक्षत्राणि च राशयः ।
दीर्घमायुः प्रकुर्वन्तु यदीया वर्षपत्रिका ॥

शुभशाके १८५२, विक्रमसंवत्सरे १९८७ सनाब्दे १३३८ चैत्रशुक्ल सप्तम्यां दण्डादि २९।५० मृगशिरानक्षत्रे दं० ३२।२८ सौभाग्ययोगे दं० ५१।८ गरकरणे दं० ०।४८ गुरुवासरे श्रीसूर्योदयादिष्टघट्यादिषु ४५।५१ धनुर्लग्नोदये शुभावलोकिते शुभसमये वावू श्रीजगन्नाथशर्ममहोदयस्य विजयप्रदवर्षप्रवेशः । गताब्दाः ३१ दिनमानम् ३०।१६ रात्रिमानम २९।४४ भयातम् १३।२३ भभोगः ५८।४७ शुभम् ।

तात्कालिक (इष्टकालिक) स्पष्टग्रहादि बनाने का उदाहरण—
पं० चैत्रशुक्ल ८ शुक्रे मि. मा. ४५।१०

	सू.	चं.	मं.	बु.	गु.	शु.	श.	के.
ग्रहराश्यादि	११	×	३	११	२	१०	८	५
	१३	×	५	२६	१८	३	२७	२४
	२०	×	५१	४	१६	०	३१	११
	५९	×	३	३	१८	१९	३४	५८
गति	५६	×	१०	१३	४	७०	३	३
	२३	×	१७	२२	६	५५	४३	११

चैत्र शुक्ल ७ गुरुवार सूर्योदय से इष्ट घटी पल ४५।५१ में स्पष्ट ग्रह बनाना है तो पञ्चाङ्ग में समीप की पंक्ति ८ अष्टमी शुक्रवार में ग्रह बना है। इसलिये पंक्ति के दिनादि ६।४५।१० में इष्टदिनादि ५।४५।५१ को घटाने से गत दिनादि (ऋण चालन) ०।५९।१९ हुआ। इससे रवि की गति ५९।२३ को गोमूत्रिका विधि से गुणा करके ५८।४१ इसमें ६० का भाग देने से अंशादि

०।५८।४१ इसको गतदिनादि (ऋण चालन) होने के कारण पंक्ति के सूर्य ११।१३।१०।५९ में घटाने से ११।१२।२२।१८ यह इष्टकालिक सूर्य हुआ । इसी प्रकार चालन से मंगल आदि ग्रहों की गति को गुणा कर ६० का भाग देकर लब्ध अंशादि फल को मंगल आदि ग्रहों में घटाने से इष्टकालिक मंगलादि स्पष्ट हो जायगा । नीचे चक्र देखो ।

तात्कालिक चन्द्र साधन का उदाहरण इसी ग्रन्थ में देखो ।

इस प्रकार वर्षेष्टकालिक स्पष्ट ग्रह चक्र—

सू.	चं.	मं.	बु.	गु.	शु.	श.	के.
११	२	३	११	२	१०	८	५
१२	९	५	२४	१८	१	२७	२४
२२	४२	४	३१	१५	५०	२७	१५
१८	११	५३	३८	१५	१२	४४	१

'मित्रंत्रिकोणत्रिभवस्थितश्चेत्' इत्यादि श्लोकानुसार मित्र-सम-शत्रु चक्र का उदाहरण—

इसी पुस्तक के पृष्ठ ११५ में वर्ष लग्न कुण्डली में देखो, सूर्य से मित्र स्थान (५।९।३।११) में केवल मंगल है, इसलिये केवल मंगल सूर्य का मित्र हुआ । तथा समस्थान (२।६।८।१२) में केवल शुक्र है इसलिये शुक्र सूर्य का सम हुआ । तथा सूर्य से शत्रु स्थान (१।४।७।१०) में चन्द्र, मंगल, बुध, बृहस्पति है इसलिये ये चारों इनके शत्रु हुए । इसी प्रकार हर एक ग्रह से मित्रादि का विचार करना । नीचे चक्र देखो—

मित्र-सम-शत्रु चक्र—

ग्रह	सू·	चं·	मं·	बु·	गु·	शु·	श·
मित्र	मं·	शु·	बु· र·	मं·	शु·	चं· गु· श·	शु·
सम	शु·	मं·	शु· गु· श· चं·	शु·	मं·	र· मं· बु·	मं·
शत्रु	चं· बु· गु· श.	बु· गु· श· र·	०	र· मं· गु· श·	र· बु· श· चं·	०	र· चं· बु· बृ·

अथ पञ्चवर्गी वल विचार—

इसी ग्रन्थ में लिखित पृष्ठस्थ श्लोकानुसार सूर्य बृहस्पति के गृह में है, बृहस्पति सूर्य का शत्रु है इसलिये गृहवल (३०) का चतुर्थांश (७।३०) यह गृहबल हुआ। तथा हद्दा चक्रानुसार सूर्य गुरु के हद्दा में है, गुरु सूर्य का शत्रु है इसलिये हद्दा बल (१५) के चतुर्थांश ३।४५ सूर्य का हद्दा का बल हुआ। सूर्य मीन के दूसरे द्रेष्काण में है, दूसरा द्रेष्काण चन्द्रमा का है, चन्द्रमा सूर्य का शत्रु है इसलिये द्रेष्काण बल (१०) का चतुर्थांश २।३० द्रेष्काण वल हुआ। तथा सूर्य शुक्र के नवमांश में है, शुक्र सूर्य का सम है इसलिये नवांश बल (५) का आधा २।३० नवांश बल हुआ। तथा उच्च बल के लिये स्पष्ट सूर्य ११। १२।२२।१८ में सूर्य के नीच राश्यंश ६।१० घटाकर शेष ५।२। २२।१८ के अंश १५२।२८।१८ का नवमांश १६।५६ यह सूर्य का उच्च वल हुआ। सव बल का योग ३३।११, इसका चतुर्थांश ८।१८ वर्ष विंशोपक बल हुआ। इसी प्रकार चन्द्रादि ग्रहों के पञ्चवर्गी बल विचार करना चाहिये। चक्र देखो—

पञ्चवर्गी बल चक्र--

ग्रह	र.	चं.	मं.	बु.	गु.	शु.	श.
गृह	७।३०	७।३०	१५।०	७।३०	७।३०	२२।३०	७।३०
हद्दा	३।४५	११।१५	१५।०	११।१५	७।३०	१५।०	१५।०
द्रेष्काण	२।३०	२।३०	५।०	१०।०	१०।०	७।३०	२।३०
नवांश	२।३०	१।१५	५।०	१।१५	५।०	५।०	१।१५
उच्च	१६।५६	१५।५५	२।२८	१।३	१८।८	१३।५२	१२।३०
योग	३३।११	३८।२५	४२।८	३०।५३	४८।८	६३।५२	३८।४५
विंशो.	८।२८	९।३६	१०।३२	७।४३	१२।२	१५।५८	९।४१

अथ वर्षेश निर्णय--

जन्मलग्नेश = मंगल । वर्ष–लग्नेश = बृहस्पति । मुन्थेश = बुध । त्रिराशीश = शनि । चन्द्रराशीश = बुध ।

इन पञ्चाधिकारियों में सब से बली बृहस्पति लग्न को देखते हैं । इस लिये बृहस्पति वर्षेश हुए ।

वर्षेश बृहस्पति का फल—

जीवेऽब्दपे बलयुते परिवारसौख्यं धर्मो शुभमहिलता

धनकीर्तिपुत्राः । विश्वास्यता जगति सन्मति विक्रमाप्ति-र्लाभो निधेर्नृपतिगौरवमप्यरिघ्नम् ।

स्पष्टार्थ । इस प्रकार और सब फल नीलकण्ठी आदि से कहना । इति दिक् ॥

अथ मुद्दादशा—

जन्मर्क्षसंख्यासहितागताब्दानेत्रोनितानन्दहृतावशेषात् ।
आचंकुराजीशबुकेशुपूर्वा मुद्दादशाः स्युः किल वर्षवेशे ॥

अर्थ—जन्म नक्षत्र संख्या को गतवर्ष में जोड़ कर २ घटावे, उसमें ९ का भाग देने से १ आदि शेष में क्रम से सूर्य, चन्द्र, कुज, राहु, गुरु, शनि, बुध, केतु, शुक्र इनकी मुद्दादशा होती है ।

मुद्दादशा चक्र—

ग्रह	सू.	चं.	मं.	रा	बृ	श.	बु.	के.	शु.
मास	०	१	०	१	१	१	१	०	२
दिन	१८	०	२१	२४	१८	२७	२१	२१	०

अथ त्रिपताकि चक्र विचार—

न्यसेद्ध्वचक्रंकिलतत्रसैकांयाताब्दसंख्यां विभजेन्नभोगैः ।
शेषोन्मितेजन्मगचन्द्रराशेस्तुल्येचराशौविलिखेच्छशांकम् ॥
परे चतुर्भाजितशेषतुल्ये स्थाने स्वराशेः खचराश्चलेख्याः ।
शुभैश्च विद्धे हिमगौशुभं स्यात् पापैश्च विद्धे हि शरीरपीडा ॥

अर्थ—मध्यरेखाग्र में वर्षलग्न राशि लिखकर क्रम से त्रिपताकिचक्र में १२ राशियों को लिखे । गतवर्ष में १ जोड़कर ९ का भाग देने से जो शेष बचे जन्मराशि से उतने संख्यक स्थान में चन्द्रमा को लिखे और ४ से भाग देकर शेष तुल्य राशि में

जन्मकुण्डलीस्थ ग्रहस्थान से शेष ग्रहोंको लिखे । चन्द्रमा शुभग्रह से विद्ध हो तो शुभ फल, पाप ग्रह से विद्ध हो तो शरीर में क्लेश होता है ॥

उदाहरण--गत वर्ष ३१ में १ जोड़कर ३२ में ९ का भाग देने से शेष ५ बचा, इसलिये जन्मकालिक चन्द्रराशि मकरसे पञ्चम वृषराशि में चन्द्रमा हुआ और सैक गत वर्ष में ४ का भाग देने से शेष ० अर्थात् ४ बचा, इसलिये जन्मकालिक स्वस्वाश्रित राशि से चौथे चौथे राशि में शेष सूर्यादिक ग्रह हुए। स्पष्टार्थ चक्र देखो--
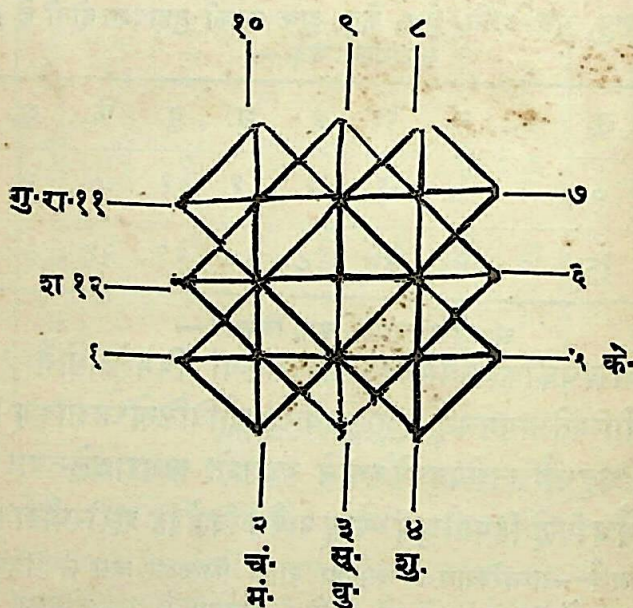
इस त्रिपताकिचक्र में चन्द्रमा किसी ग्रह से विद्ध नहीं है, इसलिये शुभाशुभ फल देने में सामान्य हुआ ।

पुरुष के जन्मलग्न से ग्रहों का भावफल चक्र—

	सूर्य	चन्द्र	भौम	बुध	गुरु	शुक्र	शनि. राहु केतु
१ तनु	शरीर पीडा	सुख	रक्त-विकार	सुख	कान्तिमान	सुख	दुःख
२ धन	क्रोधि धनहानि	अतिलाभ	दुःख	अतिलाभ	धनलाभ	लाभ	धन का नाश
३ सहज	नीरोगता	निर्दय	क्रोधी सुखी	धनवृद्धि	सुबुद्धि	कृश कामी	स्त्रियों का प्रिय
४ माता	अतिकष्ट	सुखभोग	कष्ट	सुखभोग	सुखी	भोगी	अतिपीड़ा
५ सुत	दुःख	अधिक पुत्र	सन्तानहानि	अल्पपुत्र	पुत्रवान	पुत्रयुक्त	सन्तानहानि
६ शत्रु	शत्रु का नाश	रोगी	शत्रु	बहुरोग	विकलता	बुद्धिहीन	शत्रुमान्य
७ स्त्री	कुस्त्री प्राप्ति	सुन्दरी स्त्री	स्त्रीनाश	सुन्दरी स्त्री	सुखी	चतुर	रोगीनिर्धन
८ मृत्यु	रोगी	रोगी	दुष्टबुद्धि	अनिष्ट	पीड़ा	रोगी	क्लेशित
९ धर्म	अधर्मी	धर्मात्मा	अधर्मी	धर्मरत	भाग्योदय	धर्मात्मा	दुष्टबुद्धि
१० कर्म	सुखी	यश	उपकारी	कीर्तिलाभ	सत्कर्मा	धनवान	सम्पत्तिवान्
११ आय	राजमित्र	धनलाभ	लाभ	ज्ञानी	धनवृद्धि	गुणी	कीर्तिवान्
१२ व्यय	दुःस्वभाव	नेत्रपीड़ा	पापी	निर्धन	दुर्बल	दुःखी कामी	आलसी

स्त्री के जन्मलग्न से ग्रहों का भावफल चक्र—

	सूर्य	चन्द्र	कुज	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	रा. के.
१ तनु	विधवा	अल्पायु	विधवा	पतिव्रता	पतिव्रता	पतिव्रता	दरिद्रा	पुत्रनाश
२ धन	दुःखी	पुत्रवती	दुःखिता	सौभाग्य वती	सौभाग्य	सौभाग्य वती	दुःख	दरिद्रा
३ सहज	पुत्रवती	धनाढ्य	पुत्रिणी	धनवती	पुत्रवती	पुत्रवती	लक्ष्मी वती	धनवती
४ सुहृद	दरिद्रा	दुर्भगा	अल्प सन्तति	सुखी	सुखी	सुखी	स्वल्प-दुग्धा	पुत्रनाश
५ सुत	सन्तान नाश	कन्या-धिका	पुत्र-मरण	उत्तम फल प्रा.	उत्तम सुख	उत्तम-सुखी	रोगिणी	मरण
६ रिपु	धनवती	विधवा	धन-युक्ता	क्लेश-प्राप्ति	धनवती	दरिद्रा	धनवती	धनाढ्य
७ जाया	रोगिणी	प्रवासिनी	स्वामि-नाश	क्षय	भयबंधन	भर्तुः प्रिया	वैधव्य	धनहानि
८ मृत्यु	विधवा	अतिकष्ट	धनवती	स्वजन वियोग	स्वजन वियोग	मरणम्	बहुत सन्तान	मरणान्त वि०
९ धर्म्म	धर्म निष्ठा	पुत्रवती	कर्मका-रिणी	उत्तम-भोग	धर्म वृद्धि	धर्म-वृद्धि	वन्ध्या	वन्ध्या
१० कर्म्म	पापिनी	व्यभिचारी	मृत्यु	धनवती	पतिधन-वान् हो	पति धनी हो	पापिनी	विधवा
११ आय	पुत्रवती	लक्ष्मीवती	पुत्रवती	सुखी	आयु-ष्मती	पुत्रवती	धनवती	सौभाग्यवती
१२ व्यय	अति-व्यय	दिवान्ध	वन्ध्या	सुपुत्र-वती	सुशीला	पतिव्रता	अति-व्यया	व्यभिचा-रिणी

वर्षप्रवेश कालिक ग्रहों का भावफल।

	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२
सूर्य	क्लेश चिन्ता	शोक	धनलाभ	भय हानि	रोग भय	सुख	स्त्रीकष्ट	कष्ट भय	धर्मक्ष.	सुख अर्थ	सुख लाभ	उद्योग पीडा
चन्द्र	कफ ज्वर	नेत्र पी. धन ला.	धन हर्ष	सुख	सुख सुमति	पीडा व्यय	ज्वर भय	कष्ट	पुण्य धन	सुकर्म जय	यश धन	व्यय नेत्ररोग
भौम	वातार्त व्रण	मध्यम नेत्र रोग	धन	रोग भय	पुत्रार्ति	सुख	स्त्रीकष्ट	रोग	धन पुण्य	कर्मोदय	धन लाभ	व्यय नेत्र पी.
बुध	सौख्य धन लाभ	धन लाभ	रोग नाश	सुख	सुत लाभ	भय स्त्रीकष्ट	स्त्री सुख	कष्ट	लाभ सुख	सुख धन	जय धन	विवाद व्यय
गुरु	सुख प्रा० अर्थ ला०	यश धन	जय धन	सुत लाभ	सुत सुख	कष्ट	स्त्री सुख	ज्वर	धर्मसुख	जय शुभ	जयलाभ	व्यय व्यथा
शुक्र	सुमान धन लाभ	धन लाभ	सहज सुख	कृषि-लाभ	पुत्रसुख	विवाद कष्ट	स्त्री सुख	कष्ट	धर्म धन	वस्त्र लाभ	धनलाभ	नेत्र रोग
शनि	रिपुनाश वातरोग	विरोध	धन भोग	गुप्त चिन्ता	सुतकष्ट	धन-लाभ	स्त्रीकष्ट	कष्ट	भाग्य धन	धन हानि	धनलाभ	व्यय कष्ट
राहु केतु	शिर रोग कलह	भय पीडा	धन लाभ	कष्ट	बुद्धि नाश	शत्रुनाश	रोग भय	कष्ट भय	धर्म नाश	लाभ सुख	अतिसुख	कष्ट
मुंथा	धन यश	धन यश	सुख	रोग भय	पुत्रसुख	रोग भय	स्त्रीकष्ट	धननाश	लाभ सुख	कार्यसिद्धि	सौभाग्य सुख	व्यय रोग

वर्षप्रवेश कालिक ग्रहों का भावफल ।

सूर्य	चन्द्र	कुज	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	राहु	केतु	मुथहा
माणिक्य	वंशपात्र	प्रवाल	मूंग	घोड़ा	चित्राम्बर	माष	गोमेद	वैडूर्य	वंशपात्र
गेहूँ	तण्डुल	गेहूँ	हरितवस्त्र	चीनी	श्वेत अश्व	तिल	रत्न	तिल कम्बल	तण्डुल
धेनु	कर्पूर	मसूर	कांस्य	हल्दी	धेनु	तैल	अश्व	कस्तूरी शस्त्र	रक्तवस्त्र
कुसुंभ	मौक्तिक	ताम्र वस्त्र	मृगमद	पीतधान्य	हीरा	कुलथी कृष्णगौ	नीलवस्त्र	कृष्णवस्त्र	मोदक
गुड़	श्वेतवस्त्र	गुड़	घृतवासी	पीतवस्त्र	रौप्य	महिषी लोह	कम्बल अभ्रक	तैल छाग	लाक्षा-भरण-
ताम्रपात्र रक्तपुष्प	वृष रौप्य	सुवर्ण	पञ्चरत्न	पुष्पराग	सुवर्ण	श्यामवस्त्र	तिल	कृष्ण पुष्प	सघृत-कांस्यपात्र
रक्तवस्त्र सुवर्ण	घृतकुम्भ	कनेर	हस्तिदन्त	लवण कांचन	सुगन्धघृत	इन्द्रनील	तैल लोह	लोह पात्र	सुवर्ण
जप ७०००	जप ११०००	जप ७०००	जप ८०००	जप १००००	जप १६०००	जप २३०००	जप १८०००	जप १००००	जप

अथ नवग्रहमन्त्रः—

सूर्यस्य वैदिकमन्त्रः—

आकृष्णेन रजसा वर्त्तमानो निवेशयन्नमृतं मर्त्यञ्च ।
हिरण्ययेन सविता रथेनादेवो याति भुवनानि पश्यन् ॥

तान्त्रिकमन्त्रः-ॐ घृणिः सूर्याय नमः ॥

चन्द्रस्य वैदिकमन्त्रः

ॐ इमं देवाऽअसपत्न ँ सुवध्वं महते क्षत्राय महते ज्यैष्ठ्याय महते ज्यानराज्यायेन्द्रस्येन्द्रियाय । इममुष्य पुत्रममुष्यै पुत्रमस्यै विशऽएष वोऽमी राजा सोमोऽस्माकं ब्राह्मणाना ँ राजा ॥

तान्त्रिकमन्त्रः—ॐ सों सोमाय नमः ॥

कुजस्य वैदिकमन्त्रः—

ॐ अग्निर्मूर्द्धा दिवः ककुत्पतिः पृथिव्याऽअयम् । अपा ँ रेता ँ सि जिन्वति ॥

तान्त्रिकमन्त्रः--ॐ अं अङ्गारकाय नमः ।

बुधस्य वैदिकमन्त्रः—

ॐ उद्बुध्यस्वाग्ने प्रतिजागृहि त्वमिष्टापूर्त्ते स ँ सृजेथामयञ्च । अस्मिन्त्सधस्थेऽअध्युत्तरस्मिन् विश्वे देवा यजमानश्च सीदत ।

तान्त्रिकमन्त्रः—ॐ बुं बुधाय नमः ॥

जीवस्य वैदिकमन्त्रः—

ॐ बृहस्पतेऽअति यदर्योऽअर्हात् द्युमद्विभाति क्रतुमज्जनेषु । यद्दीदयच्छवसऽऋतप्रजा तत्तदस्मासु द्रविणं धेहि चित्रम् ॥

तान्त्रिकमन्त्रः—ॐ बृं बृहस्पतये नमः ।

शुक्रस्य वैदिकमन्त्रः—

ॐ अन्नात् परिश्रुतो रसं ब्रह्मणाव्यपिबत्क्षत्रं पयः सोमं प्रजापतिः । ऋतेन सत्यमिन्द्रियं विपानँ शुक्रमन्धसऽइन्द्रस्येन्द्रियमिदं पयोऽमृतं मधु ॥

तान्त्रिकमन्त्रः—ॐ शुं शुक्राय नमः ॥

शनेर्वैदिकतन्त्रः—

ॐ शन्नो देवीरभिष्टयऽआपो भवन्तु पीतयेशँय्योरभिस्रवन्तु नः ॥

तान्त्रिकमन्त्रः—ॐ शं शनैश्चराय नमः ॥

राहोर्वैदिकमन्त्रः—

ॐ कयानश्चित्रऽआभुव दूती सदा वृधः सखा । कया शचिष्ठया वृता ॥

तान्त्रिकमन्त्रः—ॐ रां राहवे नमः ॥

केतोर्वैदिकमन्त्रः—

ॐ केतुं कृण्वन्न केतवे पेशो मर्याऽअपेशसे । समुषद्भिरजायथाः ॥

तान्त्रिकमन्त्रः—ॐ कें केतवे नमः ॥

॥ इति नवग्रहमन्त्राः ॥

अथ महामृत्युञ्जयमन्त्रः—

ॐ हौं ओं जुँसः भूर्भुवः स्वः त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धि पुष्टिवर्धनम् । उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय माऽमृतात् भूर्भुवःस्वरों जुँ सः हौं ॐ ॥

लघुमृत्युञ्जयमूलमन्त्रः—(ॐ जुँ सः)

जपार्थ सङ्कल्पः ।

ॐ अद्यामुकमासेऽमुकपक्षेऽमुकतिथौ 'अमुक' गोत्रस्य मम 'अमुक' शर्मणो जन्मकालिकजन्मलग्नावधिक 'अमुक' स्थानस्थित 'अमुक' ग्रहसंसूचितसकलारिष्टझटितिप्रशमनपूर्वकदीर्घायुष्यवलपुष्टिनैरुज्यप्राप्तिकामोऽद्यारभ्य यथाकालं माध्यन्दिनीयशाखान्तर्गत 'अमुक' इतिमन्त्रस्य यथा संङ्ख्याकजपरूपपुरश्चरणमहं करिष्ये ।

यहाँ 'अमुक' के स्थान में जो नाम आदि हो उसका उच्चारण करना चाहिये ॥

अथ पल्लीपतन-सरठारोहण-फल तथा शान्ति—

पादयोर्जघने पाण्योर्गुदे गुह्ये च जङ्घयोः
पल्ल्याः पाते तथाःऽरोहे सरठस्य फलं न सत् ॥
अन्यत्र शुभदं पश्चात् सचैलं स्नानमाचरेत् ।
दत्वा शिवालये दीपं मुखमाज्ये विलोकयेत् ॥
पल्लीसरठयो रूपं सुवर्णेन विनिर्मितम् ।
तदर्धार्धप्रमाणेन वित्तशाठ्यविवर्जितः ॥
वस्त्रयुग्मेन संवेष्ट्य श्रोत्रियाय निवेदयेत् ।

अर्थ–दोनों पांव, जंघा, गुदामार्ग, लिङ्ग, और दोनों हाथ पर पल्ली (छिपकली) गिरे, अथवा सरठ [गिरगिट] चढ़ै तो अशुभ फल है और दूसरे अङ्गों पर शुभ फल होता है। पल्ली के गिरने और सरठ के चढ़ने के बाद वस्त्र सहित तत्काल में स्नान करके शिव-मन्दिर में दीप दान करै और घृत में अपना मुख देखे तथा १६ मासा भर सुवर्ण से पल्ली वा सरठ की प्रतिमा बनवा कर उसे दो कपड़े से ढक कर वेद जानने वाले ब्राह्मणों को देना चाहिये ॥ यदि १६ मासा सुवर्ण न हो सके तो ८ मासा अथवा चार मासा वा २ मासा वा एक मासा जैसे विभव हो सुवर्ण की प्रतिमा बनवावे, कृपणता न करै ॥

पञ्चगव्यं प्राशयित्वा कुर्याद्राजावलोकनम् ॥
शस्ते वाप्यथवाशस्ते यदिच्छेच्छुभमात्मनः ।
पुण्याहवाचनं कृत्वा शान्तिकर्म समाचरेत् ॥

अर्थ—बाद पञ्चगव्य भक्षण कर राजाका दर्शन करै। शुभ वा अशुभ फल कुछ भी हो शुभ चाहनेवाला अवश्य पुण्याहवाचन पूर्वक शान्ति करै ॥

सर्पकाककपोतानां शीर्षे पातोऽशुभप्रदः ।
स्नात्वा सद्यो द्विजेभ्यश्च देयं वस्त्रं सुवर्णकम् ॥

अर्थ—सर्प-कौव्वा-कपोत [पडवा] मस्तक पर गिरे तो अशुभ होता है, ऐसी हालत में स्नान करके ब्राह्मणों को सुवर्ण और वस्त्र देना चाहिये ॥

अथ-नेत्रस्फुरणफल--

दक्षिणाक्षिपरिस्पन्दो दक्षिणस्य करस्य च ।
हृदयस्य तथा ह्लादः सद्यः संसिद्धिसूचकः ॥
नेत्रस्याधः स्फुरणमसकृत् सङ्गरे भङ्गहेतु-
स्तस्यैवोर्ध्वं हरति दुरितं मानसं दुःखजालम् ।
नेत्रोपान्ते भवति च धनं बन्धुनाशश्च कोणे
वामस्यैतत् फलमभिहितं दक्षिणे वैपरीत्यात् ॥

अर्थ-दाहिना नेत्र और दक्षिण हस्त तथा हृदय के स्फुरण [फरकना] आनन्द और सिद्धिदायक होता है । विशेष-वाम नेत्र के नीचे स्फुरण से संग्राम में पराजय, तथा वाम नेत्र के ऊपर भाग के स्फुरण से दुःखका नाश, वामनेत्र के समीप में फरकने से धन लाभ, वामनेत्र के कोण स्फुरण से बन्धु नाश, और दाहिने नेत्र में इससे उलटा फल समझना चाहिये ।

अङ्गस्फुरण--

अङ्गस्फूतिर्दक्षिणाङ्गे नराणां वामेसास्यात्सुन्दरीणांशुभाय ।
सर्वेषांसाभालशीर्षेसुखाप्त्यैन्यस्तादुष्टातत्रदद्यात्स्वशक्त्या ॥

अर्थ-पुरुष का दक्षिण अङ्ग और स्त्री का बायां अङ्ग फरकना शुभ है । और मस्तक के फरकने से स्त्री पुरुष दोनों को शुभ होता है । तथा स्त्री के दहिने अङ्ग और पुरुष के वायें अङ्ग फरकने से अशुभ फल होता है । इसलिए यथा शक्ति दान करना चाहिये ॥

अथ शुभाशुभ स्वप्नफल—

सर्वाणि शुक्लान्यतिशोभनानि
कार्पासतक्रास्थिविवर्जितानि।
सर्वाणि कृष्णानि च निन्दितानि
गोवाजिहस्तिस्वजनैर्विना हि॥

अर्थ—रुई, तक्र, अस्थि (हड्डी) को छोड़दर जितने शुक्ल (उजले) पदार्थ हैं सब का स्वप्न में दर्शन शुभ फल दायक है। अर्थात् रुई तक्र (मट्ठा) हड्डी के स्वप्न में देखने से अशुभ फल होता है। और गाय घोड़ा-हाथी और ब्राह्मण तथा अपने वन्धु वर्ग को छोड़ कर जितने काले पदार्थ हैं उनके स्वप्न में दर्शन से अशुभ फल होता है। अर्थात् गाय घोड़ा हाथी ब्राह्मण—स्वजन ये काले भी रहैं तो शुभ फलदायक होते हैं।

इति दरभङ्गामण्डलान्तर्गतचौगमानिवासि ज्यौ०
आचार्य-पं० श्रीसीतारामशर्मसम्पादितं
ज्योतिश्शास्त्रसोपानं सम्पूर्णम्।

सूचीपत्रम् ।

आनन्द रामायण भा० टी०	१२)
देवीभागवत मूल रेशमी गु०	३॥)
महामृत्युञ्जय जपविधि भा० टी०	=)
महाकालध्वनिमृत्युञ्जय स्तोत्र	[illegible])
बृहत्स्तोत्ररत्नाकर स्थूलाक्षर	१)
लघुसिद्धान्तकौमुदी सटिप्पण	≈)
सारस्वतम् ,,	≡)
सिद्धान्त चन्द्रिका संपूर्णम् ,,	।॥)
गणित कौमुदी	।≈)
हिन्दी पाठावली	।≈)
छन्दकौमुदी	।≡)
रघुवंशं महाकाव्यं संपूर्णम् मल्लीनाथ कृत संजीवनी टीका	१।)
,, ,, १–५ सर्गाः गौरीनाथ	१।≡)॥
,, ,, १–५ मल्लीनाथ	।≡)
रामायण महाभारतीय शीलनिरूपणाध्यायः प्रथमा परीक्षोपयोगि	।≈)
पंचतंत्रं मूलमात्रं संपूर्णं सटिप्पणम्	॥≈)

पुस्तक प्राप्ति स्थानम्—

बा० कन्हैयालाल बृजभूषणदास

वाणीविलास-संस्कृत पुस्तकालय;

कचौड़ीगली, बनारस सिटी ।